इकाई 10 *जनपद* और *महाजनपद* : नगरीय केंद्रों का उदय, समाज और अर्थव्यवस्था*

इकाई की रूपरेखा

10.0 उद्देश्य

10.1 प्रस्तावना

10.2 वैदिक युग तथा छठी शताब्दी बी.सी.ई

10.3 नगर केन्द्र क्या है?

10.4 छठी शताब्दी बी.सी.ई. की पृष्ठभूमि

10.5 हमारी जानकारी के स्रोत

10.6 छठी शताब्दी बी.सी.ई. के नगर
- 10.6.1 साहित्य में नगरों तथा कस्बों के प्रकार
- 10.6.2 प्राचीन भारत में नगर की छवि
- 10.6.3 नगर का भ्रमण
- 10.6.4 विनिमय की वस्तुएँ

10.7 पुरातात्विक साक्ष्यों के अनुसार नगर

10.8 बस्तियों के प्रकार-I : *जनपद*

10.9 नए समूहों का उदय
- 10.9.1 *गहपति*
- 10.9.2 व्यापारी
- 10.9.3 शासक और शासित

10.10 बस्तियों के प्रकार-II : *महाजनपद*
- 10.10.1 जीवक की कथा
- 10.10.2 गाँव
- 10.10.3 कस्बे और शहर

10.11 सोलह *महाजनपद*

10.12 समाज
- 10.12.1 क्षत्रिय
- 10.12.2 ब्राह्मण
- 10.12.3 *वैश्य* और *गहपति*
- 10.12.4 *शूद्र*
- 10.12.5 घुमक्कड़ संन्यासी
- 10.12.6 स्त्रियों की दशा

10.13 अर्थव्यवस्था
- 10.13.1 खाद्य उत्पादक अर्थव्यवस्था के विकास के कारण
- 10.13.2 ग्रामीण अर्थव्यवस्था
- 10.13.3 शहरी अर्थव्यवस्था

---

* यह इकाई ई.एच.आई.-02, खंड-4 से ली गई है।

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

10.13.4 शहरी व्यवसाय

10.13.5 व्यापार और व्यापारिक मार्ग

10.14 सारांश

10.15 बोध प्रश्नों के उत्तर

10.16 शब्दावली

10.17 संदर्भ ग्रंथ

10.0 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप :

- छठी शताब्दी बी.सी.ई. के समाज तथा उससे पूर्व के समाज के अंतर को समझ सकेंगे;
- एक शहर के वास्तविक अर्थ तथा ग्रामीण केन्द्रों से इसकी भिन्नता को समझ सकेंगे;
- उन मुख्य कारणों को जान सकेंगे जिनसे छठी शताब्दी बी.सी.ई. के दौरान नगरीकरण हुआ;
- यह जानकारी प्राप्त कर सकेंगे कि उस समय किस प्रकार के नगर अस्तित्व में थे;
- छठी शताब्दी बी.सी.ई. में नगरीय जीवन की बहुत सी विशेषताओं को समझ सकेंगे;
- विभिन्न मुख्य *जनपदों* तथा *महाजनपदों* के विषय में जान सकेंगे;
- छठी शताब्दी बी.सी.ई. के दौरान समाज के नये समूहों के उदय के संदर्भ में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।

  आप उन मुख्य सामाजिक व आर्थिक परिवर्तनों को जो दूसरे शहरीकरण के समय निश्चित रूप से उभरे, जान सकेंगे, मुख्यतया :

- समाज के मुख्य अंग, सामाजिक व्यवस्था और शूद्रों के ऊपर लगाए गये नियंत्रण;
- खाद्य उत्पादक अर्थव्यवस्था के विकास के प्रमाण एवं कारक तत्व;
- ग्रामीण एवं शहरी अर्थव्यवस्था की मुख्य विशेषतायें, और
- इस काल की मुख्य दस्तकारियाँ तथा व्यवसाय और व्यापार की प्रकृति एवं व्यापार मार्ग।

10.1 प्रस्तावना

आपने देखा होगा कि आपके आस-पास के लोग एक ही भाषा बोलते हैं। यही नहीं, पूरा क्षेत्र एक ही प्रकार के त्यौहार मनाता है तथा उनकी शादी-ब्याह की रीतियाँ भी एक जैसी होती हैं। उनके खान-पान की आदतें भी लगभग समान ही होती हैं। सांस्कृतिक एकरूपता रखने वाले क्षेत्र कैसे अस्तित्व में आए? इस प्रक्रिया का आरंभ *जनपदों* के उदय से ही हो गया था। *जनपदों* के उदय के साथ ही भारतीय भूगोल का जन्म भी माना जा सकता है। आपको ध्यान होगा कि वैदिक समाज पर चर्चा करते हुए हमने विशिष्ट भौगोलिक क्षेत्रों पर बहस नहीं की थी। इसका कारण यह था कि लोग किसी विशेष क्षेत्र से जुड़े हुए नहीं थे। किसानों की बस्तियाँ कायम होने के साथ बस्तियों के निवासी आस-पास के क्षेत्र से भावनात्मक रूप से जुड़ गए। उन्होंने इन क्षेत्रों की नदियों, पक्षियों एवं पशुओं तथा फलों को देखा। यही नहीं, इसी समय उन्होंने किसी विशेष भौगोलिक क्षेत्र को अपना मानना शुरू किया। यह भौगोलिक

क्षेत्र अन्य समुदायों के क्षेत्रों (*जनपदों*) से पृथक् थे जो कि इन क्षेत्रों से मित्रता अथवा शत्रुता का भाव रख सकते थे। आंतरिक रूप से संबद्ध तथा बाह्य जगत से अलग होने की विशेषता वाले यह *जनपद*ीय प्राचीन भारत के आरंभिक विकास का आधार बने। ये इकाइयाँ अथवा *जनपद* समान भाषा, रीति-रिवाजों एवं धारणाओं के विकास के केन्द्र बन गए।

10.2 वैदिक युग तथा छठी शताब्दी बी.सी.ई.

जनपदों के विषय में चर्चा करते समय हमें *जनपदों* के उदय से संबंधित अनेक वस्तुओं का उल्लेख करना होता है। चूंकि *जनपद* छठी शताब्दी बी.सी.ई. तक अस्तित्व में आ चुके थे, अतः हम कह सकते हैं कि जिन क्षेत्रों में यह *जनपद* अस्तित्व में आए, वहाँ काफी बड़े परिवर्तन मूर्त रूप में प्रकट हुए। जिन क्षेत्रों में लोग *जनपदों* में रहते थे वहाँ गाँव, कस्बे और शहर हुआ करते थे। आपको ध्यान होगा कि जब हमने आरंभिक वैदिक तथा उत्तर वैदिक काल की चर्चा की थी तो हमने गाँव, कस्बे और शहर जैसी इकाइयों में लोगों के रहने का उल्लेख नहीं किया था, यद्यपि वे सामान्य बस्तियों में निवास करते थे। यही वह समय है, जबकि राजे-रजवाड़े इतिहास में पदार्पण करते हैं। इसी समय ही गहन दार्शनिक विचारों का उदय हुआ। बौद्ध मत, जैन मत और कई अन्य असनातनी सम्प्रदाय इसी समय उभरे। भिक्षु, रजवाड़े तथा व्यापारी इतिहास के पन्नों पर फैल गए। इस प्रकार, जिस युग (लगभग छठी शताब्दी बी.सी.ई. से चौथी शताब्दी बी.सी.ई.) का हम अध्ययन करेंगे वह कई अर्थों में हमारे समक्ष भारतीय समाज में हुए निरंतर परिवर्तनों को प्रकाश में लाएगा।

10.3 नगर केन्द्र क्या है?

छठी शताब्दी बी.सी.ई से प्रारम्भ होने वाले काल में भारतवर्ष में दूसरी बार नगरों का उदय हुआ। यह नगरीकरण इस दृष्टि से महत्त्वपूर्ण था कि काफी लम्बे समय तक यह नगरीय व्यवस्था रही और इसी काल में साहित्य की लेखन परम्पराओं का प्रारम्भ हुआ। जैन तथा हिन्दू धर्म के कई मतों में इस परम्परा का समावेश हुआ है तथा उपरोक्त धार्मिक वर्गों के लोग इस काल से अपने धर्मों की स्थापना का काल मानते हैं। तत्कालीन साहित्य में राजग्रह, श्रावस्ती, काशी आदि नगरों के बहुत से उदाहरण मिलते हैं। बुद्ध एवं महावीर ने अधिकांशतया नगर के लोगों को ही सम्बोधित किया।

सिंधु घाटी के नगरों की समाप्ति के पश्चात् खेतिहर और घुमक्कड़ समुदाय भारत के मैदानों में बस गए। साधारण घरों वाली छोटी ग्रामीण बस्तियाँ हर तरफ देखी जा सकती थी। यह सब राजाओं और व्यापारियों के प्रभुत्व और बाज़ार स्थलों के कोलाहल एवं कलकल से मुक्त थीं। आपने राजा हरिश्चन्द्र का नाम तो सुना ही होगा जो अपनी सत्यनिष्ठा तथा वचनबद्धता के लिए प्रसिद्ध है। हम यहाँ पर उनकी प्रारंभिक कहानी का वर्णन कर रहे हैं जिसको *ऐतरय ब्राह्मण* ग्रंथ से लिया गया है। इस ग्रंथ का समय मोटे तौर पर आठवीं सदी से नवीं सदी बी.सी.ई. के बीच का माना जा सकता है।

कहानी इस प्रकार चलती है, – राजा हरिश्चन्द्र के कोई पुत्र नहीं था। वह भगवान वरूण के पास गए और प्रार्थना की, ''अगर मेरे पुत्र की उत्पत्ति हो तो उसकी बलि में आपको दूंगा''।

उनके यहाँ रोहित नाम के पुत्र का जन्म हुआ। वरूण ने उसकी बलि की माँग की। राजा ने बहुत से बहाने बनाये और बलि को टालते रहे। जब रोहित बड़ा हुआ तो हरिश्चन्द्र ने उसको बतलाया, ''ओ मेरे प्रिय पुत्र, वरूण भगवान ने तुमको मुझे प्रदान किया है। इसलिए उनको मैं तुम्हारी बलि दूंगा''। ''नहीं'', उसने कहा और अपना धनुष लेकर वह जंगल को चला गया और एक वर्ष तक वह जंगल में घूमता रहा।

वरूण क्रोधित हो गया और हरिश्चन्द्र को दण्डित करने के लिए जलोदर रोग का अभिशाप दे दिया। रोहित ने जब यह सुना तो उसने जंगल से गाँव वापस जाने का निश्चय किया। उसने छः बार गाँव को वापस आने का प्रयास किया परन्तु इन्द्र ने उस पर दबाव डालकर उसको हर बार जंगल वापस जाने के लिए बाध्य किया।

सातवें वर्ष उसने सुनहसेप नाम के ब्राह्मण लड़के को उसके पिता से सौ सिक्कों में खरीद लिया। इसके पश्चात् वह हरिश्चन्द्र के गाँव वापस लौट आया जहां पर सुनहसेप की भगवान वरूण के लिए बलि दी जाने वाली थी। जब सुनहसेप की बलि दी जाने वाली थी तो उसने कुछ मंत्रों का उच्चारण किया जिससे वरूण अति प्रसन्न हुए और उसको बचा लिया गया। राजा का जलोदर रोग भी समाप्त हो गया।

नगरीकरण के इतिहासकार के लिए इस कहानी का यह महत्त्व है कि राजा हरिश्चन्द्र किसी नगर में नहीं रहते थे, न किसी छोटे कस्बे में बल्कि वह एक ऐसे गाँव में रहते थे जो जंगल के समीप था। छठी शताब्दी बी.सी.ई. आते-आते इस सब में काफी परिवर्तन हुआ। आप इस इकाई में जानेंगे कि राजशाही *महाजनपदों* के राजा एवं गण-संघों के क्षत्रिय मुखिया कौशाम्बी, चम्पा, श्रावस्ती, राजगृह और वैशाली जैसे नगरों में रहते थे। इस समय तक केवल बड़े नगर ही अस्तित्व में नहीं आए थे, किन्तु कृषि पर आधारित गाँव के साथ-साथ बाज़ार केन्द्र, छोटे कस्बे, बड़े कस्बे और अन्य प्रकार की बस्तियाँ भी अस्तित्व में आ चुकी थी।

नगर केन्द्र को परिभाषित करने का प्रयास बहुत से विद्वानों ने किया है। वैसे तो किसी नगर केंद्र को परिभाषित करना काफी सरल कार्य लगता है। लेकिन जब हम यह काम शुरू करते हैं तो यह प्रश्न काफी जटिल हो जाता है। जैसा कि कुछ विद्वानों का विश्वास है कि धनी आबादी होना नगर केंद्र का एक लक्षण है। तथापि हम देखते हैं कि कुछ भारतीय आधुनिक गाँवों की आबादी आस्ट्रेलिया के कुछ नगरों से भी अधिक है। इसी प्रकार, कुछ विद्वानों का तर्क है कि नगर केंद्रों का आकार गाँवों से बड़ा होता है। फिर भी, नगरों के आकार स्तर को निश्चित करना कठिन है। हम जानते हैं कि आधुनिक गाँवों का आकार हड़प्पाकालीन कालीबंगन जैसे नगरों से काफी अधिक है। इस प्रकार लोगों की संख्या या बस्ती के आकार को नगर या गाँव केंद्र को परिभाषित करने के लिए विश्वसनीय आधार नहीं माना जा सकता है। इसलिए उन कार्यों की विशेषताओं की पहचान करना महत्त्वपूर्ण है जिनको वे पूरा कर रहे हैं। गाँव में अधिकतर लोग खाद्य उत्पादन के काम में लगे हुए होते हैं। इसलिए गाँवों की सामाजिक व्यवस्था पर किसानों व खेतों की प्रधानता होती है। दूसरी ओर, नगरों में शासनकर्त्ताओं या पुजारियों या व्यापारियों की प्रधानता होती है। यह संभव है कि नगर में भी बहुत से लोग कृषि से संबंधित कार्यों में संलग्न हो। परन्तु नगर को परिभाषित करने के लिए कृषि के अतिरिक्त गतिविधियों का होना आवश्यक है।

हम उदाहरणार्थ बनारस को लेते हैं जो भारत के जीवित प्राचीनतम नगरों में से एक है। इसकी प्रसिद्धि अच्छी किस्म का चावल उत्पादन करने के कारण ही नहीं परन्तु एक बहुत महत्त्वपूर्ण तीर्थ केंद्र होने के कारण है। बनारस सम्पूर्ण भारत के तीर्थ यात्रियों को आकर्षित करता था। ये तीर्थ यात्री मन्दिर में देवी देवताओं पर विभिन्न प्रकार के उपहार चढ़ाते थे। इस तरह से जो लोग मंदिरों के स्वामी थे वे सारे देश से आने वाले तीर्थ यात्रियों के संसाधनों को प्राप्त करने में सक्षम थे। नगर केंद्र की दूसरी विशेषता यह है कि अपने साथ-साथ यह अपने प्रभाव क्षेत्र के अंतर्गत आने वाली अधिकतर जनसंख्या के संबंध में भी काम करता है। इस प्रकार नगर अपनी भौतिक सीमा से कहीं ज्यादा बड़े क्षेत्र के लोगों को भी प्रशासनिक, आर्थिक और धार्मिक सेवाएँ उपलब्ध करा सकता है। प्रभाव क्षेत्र की जनसंख्या के साथ यह सम्बद्धता नगर केंद्र के लिए लाभदायक है। इसका अर्थ यह है कि शहर के निवासी प्रभाव क्षेत्र में रहने वाले लोगों के संसाधनों का प्रयोग करने में सक्षम हैं। इस कार्य को वस्तु कर या नज़राना वसूल

करके किया जा सकता है। नगर में रहने वाला व्यापारी धातुओं, खनिजों और विलासिता की वस्तुओं की आपूर्ति को नियंत्रित करके ग्रामीण क्षेत्रों के संसाधनों के एक हिस्से को हड़प करने में (विनियोग करने में) सक्षम है। इसका तात्पर्य यह है कि शहरों में रहने वाले राजाओं, पुजारियों तथा व्यापारी वर्गों के पास साधारण आदमी की तुलना में अधिक धन है। ये वर्ग अपने धन का उपयोग अधिक धन, सम्मान एवं ताकत प्राप्त करने में करते हैं। अब, प्रत्येक समाज में धनी व ताकतवर लोगों के दिखावट के अपने-अपने तरीके होते हैं। कुछ समाजों में सम्पन्न लोग बड़े-बड़े महल बनाते हैं तो कुछ सुन्दर मन्दिर बनाते हैं और कुछ महाबलि यज्ञों का आयोजन करते हैं। अन्य लोगों की रुचि मूल्यवान धातुओं व पत्थरों को रखने में होती है।

राजाओं, पुजारियों और व्यापारियों तथा किसानों के अलावा नगरों में दस्तकार और कारीगर भी रहते हैं जो नगर के लिए विलासिता की चीज़ों एवं शहर से बाहर के लोगों के लिए आवश्यक वस्तुओं का उत्पादन करते हैं। इन कारीगरों को शहर के सम्पन्न लोगों की भांति विशेषाधिकार प्राप्त नहीं होते। उदाहरण के लिए, व्यापारी और प्रशासक काफी धनी हो सकते हैं परन्तु लुहार, राजगीर या बढ़ई गरीब ही होंगे। इस प्रकार, धनी और गरीब, दोनों की उपस्थिति नगर की एक विशेषता है।

> हम कह सकते हैं कि नगर उन स्थलों को कहा जा सकता है जहाँ पर आबादी का महत्त्वपूर्ण वर्ग खाद्य उत्पादन के अतिरिक्त अन्य दूसरी गतिविधियों में संलग्न है।

इस प्रकार की विभिन्न सामाजिक-आर्थिक गतिविधियों के कारण उन लोगों में उचित तालमेल करने में कठिनाई होती है जो लोग इन गतिविधियों में व्यस्त हैं। उदाहरण के लिए, लुहार को किसान से अनाज की आवश्यकता होगी या व्यापारी को अपना माल एक क्षेत्र से दूसरे क्षेत्र को ले जाने में लुटेरों से सुरक्षा की आवश्यकता होगी। ऐसी स्थिति में जहाँ प्रत्येक समूह दूसरे समूह के बिना जीवित नहीं रह सकता वहाँ उनकी गतिविधियों में तालमेल रखने के लिए एक केंद्रीकृत संगठन की आवश्यकता होती है। गरीब व धनी के बीच शत्रुता पर नियंत्रण करने की आवश्यकता और नगर के उपभोग के लिए कृषि उत्पाद को गतिशील बनाने की आवश्यकता ने केंद्रीकृत शक्ति की उत्पत्ति की संभावनाओं को पैदा किया। केंद्रीकृत निर्णय लेने वाले गुटों की उत्पत्ति लगभग उसी समय हुई जब शक्ति पर एकाधिकार रखने वाले गुटों की उत्पत्ति हुई। इस प्रकार की सामाजिक संरचना में यह तथ्य निहित है कि एक प्रकार का राज्य समाज अस्तित्व में आया।

> इस तरह कारीगरों, धनी व गरीब लोगों और प्रशासन की उपस्थिति शहरी समाज की विशेषता है।

10.4 छठी शताब्दी बी.सी.ई की पृष्ठभूमि

प्राचीन भारत में *महाजनपदों* और केंद्रकृत प्रणालियों के उद्‌भव के विषय में हम जल्द बतायेंगे। हम देखेंगे कि एक समय में ब्राह्मणों का एक जाति वर्ग (सूचि) में कैसे उद्‌भव हुआ और जो अनुष्ठानिक कार्य के विशेषज्ञ हो गये। फिर क्षत्रिय योद्धाओं और भू-स्वामियों का वर्ग आया जिसने क्रमिक रूप से किसानों तथा व्यापारियों पर कर लगाना प्रारम्भ किया। उत्तर वैदिक काल में सरदारों ने बलि अनुष्ठानों के अवसर पर अपनी सम्पत्ति को खर्च करना और वितरित करना प्रारम्भ कर दिया। अधिक से अधिक, विशाल से विशाल स्तर पर बलि यज्ञों के आयोजन करने से सरदारों के बीच प्रतियोगिता होने लगी जिससे कि वे अधिक से अधिक लूट, कर व नज़राना प्राप्त करने को बाध्य हो गये। इस व्यवस्थित कृषक समाज में कृषि उत्पाद और पालतू पशु सम्पत्ति के सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण प्रतीक थे। विशेषकर, कृषि उत्पाद इस प्रकार की सम्पत्ति थी जिसकी साल दर साल जुताई की भूमि को बढ़ाकर और अधिक

उत्पादन करने वाले कृषि के तरीकों को अपनाकर प्राप्त किया जा सकता था। शासकों की अधिक से अधिक धन की लालसा ने अधिक से अधिक भूमि पर खेती करने तथा चरवाहों एवं चारा खोजकर लाने वालों को बसने के लिए बाध्य किया। पुरातात्विक साक्ष्यों से स्पष्ट होता है कि बहुत-सी कृषि बस्तियाँ 6वीं शताब्दी बी.सी.ई. से 7वीं शताब्दी बी.सी.ई. के बीच अस्तित्व में आयीं। मध्य गंगा घाटी में बढ़ते हुए लोहे के औज़ारों का प्रयोग तथा रोपाई द्वारा की गई खेती ऐसे दो कारक थे जिनसे कृषि उत्पादन में वृद्धि करने में काफी मदद मिली।

लोहे का प्रयोग और रोपाई द्वारा खेती

1000 बी.सी.ई. के आस-पास भारतीयों ने लोहे को पिघलाने की कला को सीख लिया था। आगे आने वाली तीन या चार शताब्दियों में लोहे का प्रयोग बढ़ता गया। इसलिए उज्जैन, श्रावस्ती और हस्तिनापुर से बड़ी संख्या में लोहे के उपकरण एवं औज़ार प्राप्त हुए हैं। विशेषकर लोहे के हथियारों का प्रयोग काफी बड़े स्तर पर होने लगा था। जिसके कारणवश किसानों की तुलना में क्षत्रियों की शक्ति में वृद्धि हुई। क्षत्रिय वर्गों ने लोहे के हथियारों की सहायता से किसानों से अधिक धन को वसूल किया। लोहे के हथियारों ने उनकी युद्ध, विजय और लूट-पाट की भूख को और बढ़ाया।

लोहे के प्रयोग का अर्थव्यवस्था पर भी प्रत्यक्ष प्रभाव पड़ा। लोहे की कुल्हाड़ी से जंगलों को साफ किया जा सका और लोहे की फाल वाले हल से कृषि कार्यों को करने में सुविधा हुई। यह मध्य गंगा घाटी में (प्रयागराज और भागलपुर के मध्य का क्षेत्र) काफी उपयोगी था जहाँ पर रोपाई द्वारा धान की खेती की जाती थी। धान की रोपाई को भी इस काल में सीख लिया गया था। यह सर्वविदित तथ्य है कि परंपरागत कृषि में तराई चावल की खेती वाले क्षेत्र में पैदावार गेहूँ या मोटे अनाजों की तुलना में अधिक थी। चावल उत्पादक मध्य गंगा घाटी में, गेहूँ उत्पादक ऊपरी गंगा घाटी की तुलना में अधिक अनाज का उत्पादन होता था। प्रारंभिक बौद्ध साहित्य में चावल व खेतों की किस्म का बार-बार वर्णन हुआ है। यह व्यापक स्तर पर चावल की खेती की ओर निर्णायक परिवर्तन को स्पष्ट करता है। अधिक खाद्य उत्पादन के कारण जनसंख्या के बढ़ने में सहायता मिली, जिसकी अभिव्यक्ति उस समय के प्राप्त हुए पुरातात्विक स्थलों में वृद्धि के रूप में होती है। अधिक अन्न उत्पादन ने यह संभावना बनाई कि ऐसे सामाजिक समूह अस्तित्व में आये जो खाद्यान्न उत्पादन में लिप्त नहीं थे।

वैदिक बलि यज्ञों से तात्पर्य था कि सरदारों के द्वारा जो अतिरिक्त उत्पाद एकत्रित किया जाता था वह यज्ञों के आयोजन के समय उपहारों के रूप में चला जाता था। मध्य गंगा घाटी क्षेत्र में आयोजित होने वाले अनुष्ठानों व बलि यज्ञों का स्वरूप ऊपरी गंगा घाटी क्षेत्र में आयोजित होने वाले अनुष्ठानों व बलि यज्ञों से भिन्न था। जिसका अर्थ था कि जिस अतिरिक्त उत्पादन को सरदारों द्वारा एकत्रित किया जाता था वह बलि यज्ञों के अवसर पर खर्च नहीं होता था। जिन बढ़ते हुए समूहों का इस अतिरिक्त धन पर नियंत्रण था वे ही नवोदित राज्यों के शासक वर्ग बन गए और इसी धन की आधारशिला पर छठी शताब्दी बी.सी.ई. के नगरों की उत्पत्ति हुई।

10.5 हमारी जानकारी के स्रोत

हमें *जनपदों* और *महाजनपदों* के विषय में जानकारी कुछ वैदिक तथा बौद्ध साहित्य से प्राप्त होती है। *ब्राह्मण* ग्रंथ एक वैदिक स्रोत का उल्लेख करते हैं जिसमें वैदिक अनुष्ठान के तरीकों का उल्लेख है। इसी प्रकार दार्शनिक समस्याओं को रेखांकित करने वाले *उपनिषदों* को भी वैदिक साहित्य का अंग माना जाता है। यह ग्रंथ 800 बी.सी.ई. के बाद से लिखे जाते रहे हैं। इनमें कई *जनपदों* और *महाजनपदों* का उल्लेख है जिसमें हमें खेतिहर समुदायों की बस्तियों के विषय में विविध जानकारी प्राप्त होती है। इस युग के विषय में जानकारी का एक अन्य

स्रोत बौद्ध साहित्य है। *संघ* के नियमों को रेखांकित करने वाली *विनय-पिटक*, बुद्ध के उपदेशों का संग्रह *सुत्त पिटक* तथा अलौकिक समस्याओं का उल्लेख करने वाली *अभिधम्म पिटक* हमें इस युग के उपदेशक राजकुमारों, धनी एवं निर्धनों तथा गाँवों एवं कस्बों के विषय में जानकारी देते हैं। बुद्ध के पूर्व जन्मों के विषय में बताने वाली *जातक-कथाएँ सुत्त पिटक* का अंग हैं। वे हमें उस समय के समाज की स्पष्ट जानकारी देते हैं। इन ग्रंथों में विभिन्न क्षेत्रों तथा भौगोलिक विभाजनों के स्पष्ट उल्लेख मिलते हैं। इस युग के प्रति हमारी जानकारी में पुरातत्वशास्त्री भी काफी योगदान करते हैं। उन्होंने अहिच्छत्र, हस्तिनापुर, कौशाम्बी, उज्जैन, श्रावस्ती, वैशाली तथा अन्य कई स्थलों की खुदाई की है जिनका इन ग्रंथों में उल्लेख है। उन्होंने यहाँ के लोगों द्वारा प्रयोग की जाने वाली वस्तुओं, घरों, इमारतों, कस्बों आदि के अवशेष प्राप्त किए हैं। उदाहरण के लिए इस युग की पुरातात्विक उपलब्धियों से पता चलता है कि इस युग के लोग उत्तरी काले पालिश किए मृद्भांड कहे जाने वाले उत्कृष्ट बर्तनों का उपयोग करते थे, जिसका उल्लेख इकाई-7 में किया जा चुका है। पूर्वकालीन बस्तियों में लोग या तो लोहे के इस्तेमाल से अनभिज्ञ थे अथवा इसे विशेष अवसरों पर ही इस्तेमाल करते थे। छठी शताब्दी बी.सी.ई. में लोगों ने लोहे का इस्तेमाल बड़े पैमाने पर करना आरंभ किया। सम्पन्न खेतिहर बस्तियाँ और कस्बे भी खुदाई के दौरान पाए गए हैं। इस प्रकार पुरातात्विक एवं साहित्यिक स्रोतों की मिली-जुली जानकारी से हमें छठी शताब्दी बी.सी.ई तथा चौथी शताब्दी बी.सी.ई. के बीच के भारतीय समाज की सम्पूर्ण जानकारी प्राप्त हो जाती है।

उत्तर प्रदेश, बरेली जिले में स्थित प्राचीन शहर अहिच्छत्र (या अहि-क्षेत्र) के अवशेष, उत्तर पंचाल की राजधानी, एक उत्तरी भारतीय राज्य जिसका उल्लेख है महाभारत में। श्रेय : सुनीत 87। स्रोतः विकिमीडिया कॉमन्स (https://en.wikipedia.org/wiki/Janapada#/media/File:Ahichchhatra_Fort_Temple_Bareilly.jpg)।

10.6 छठी शताब्दी बी.सी.ई. के नगर

छठी शताब्दी बी.सी.ई. के नगरों के विषय में हमारी सूचना बहुत से स्रोतों पर आधारित है क्योंकि यह वह समय है जब प्राचीन भारत में इतिहास लिखने की परम्परा का श्रीगणेश हुआ। ब्राह्मणिक, बौद्ध एवं जैन साहित्य में उस समय की परिस्थितियों का वर्णन हुआ है। इस काल के बहुत से नगरों और गाँवों के उत्खनन से प्राप्त विवरण हमारी जानकारी को और पुष्ट करते हैं।

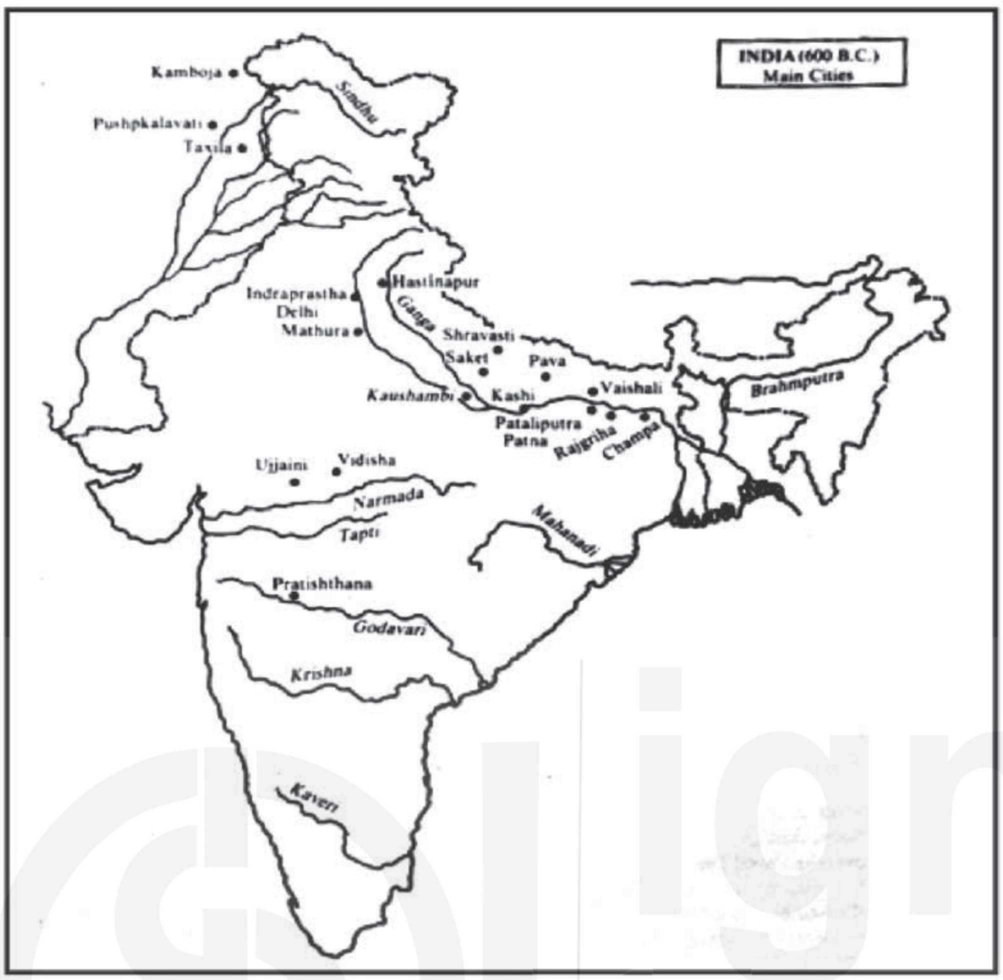

लगभग छठी शताब्दी बी.सी.ई. के मुख्य नगर। स्रोतः ई.एच.आई.-02, खंड-4, इकाई-15।

10.6.1 साहित्य में नगरों और कस्बों के प्रकार

प्राचीन भारतीय साहित्य में शहरों के प्रतीक के रूप में *पुर, दुर्ग, निगम, नगर* आदि शब्दों का पर्याप्त मात्रा में प्रयोग हुआ है। अब हम यह देखेंगे कि प्राचीन भारतीय इनको किस प्रकार से परिभाषित करते थे।

पुर – *पुर* शब्द का प्रयोग प्रारंभिक वैदिक साहित्य में भी हुआ। यहाँ इनका उल्लेख किलेबंद बस्तियों, अस्थायी शरण स्थलों या पालतू पशुओं के बाड़ों के संदर्भ में हुआ है। बाद में इस शब्द का प्रयोग राजा के निवास स्थान और परिजनों के निवास स्थान या गण संघों के शासक वर्ग के परिवार जनों के निवास स्थल के लिए होता है। धीरे-धीरे घेरे-बंदी के अर्थ में इसका प्रचलन कम होने लगा और इसका तात्पर्य शहर या नगर से लगाया जाने लगा।

दुर्ग – यह एक और शब्द है जिसका प्रयोग राजा की घेरे-बन्द राजधानी के लिए होता था। इस घेरेबंदी के कारण नगर केंद्र की सुरक्षा होती थी और यह आसपास के ग्रामीण क्षेत्रों से अलग हो जाता था। घेरेबंदी के कारण शासक वर्गों के लिए नगर में रहने वाले लोगों के कार्यकलाप को नियंत्रित करना सरल था।

निगम – एक कस्बे के प्रतीक के रूप में इस शब्द का पाली साहित्य में खूब वर्णन हुआ है। संभवतः इसका ऐसे स्थल से संबंध है जहाँ पर व्यापारी वर्ग के द्वारा चीजों की बिक्री एवं खरीदारी की जाती थी। वास्तव में कुछ विद्वानों का विश्वास है कि इन निगमों का विकास उन गाँवों से हुआ जो बर्तन, लकड़ी के सामान तथा नमक का निर्माण करने में विशेषज्ञ थे। ये *निगम* बज़ार वाले कस्बे थे, इस तथ्य की सत्यता इस बात से भी सिद्ध होती है कि बाद

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

के काल के पाए गए सिक्के दर्शाते हैं कि ये *निगम* में बनाए गए हैं। कभी-कभी साहित्यिक ग्रंथों में नगरों में ''*निगम*' शब्द का प्रयोग उस स्थल के लिए हुआ है जहाँ पर दस्तकार और कारीगर रहते और काम करते थे।

नगर – साहित्य में कस्बे या शहर के लिए प्रयोग होने वाले यह सबसे अधिक सामान्य शब्द है। इस शब्द का प्रथम बार प्रयोग *तेत्रिरिय अरण्येक* में हुआ। यह ग्रंथ सातवीं शताब्दी बी.सी.ई. से छठी शताब्दी बी.सी.ई के समय में रचा गया। एक अन्य शब्द *महानगर* का प्रयोग नगरों के लिए हुआ है। ये केंद्र *पुर* के राजनैतिक कार्य – कार्यकलाप तथा निगम के व्यापारिक कार्यकलाप का समन्वित रूप थे। इन शहरों में राजाओं, व्यापारियों तथा प्रचारकों का निवास था। बौद्ध साहित्य में 6 महानगरों का संदर्भ आता है। इनमें से अधिकतर मध्य गंगा घाटी में स्थित थे। ये राजगृह, चम्पा, काशी, श्रावस्ती, साकेत और कौशाम्बी थे। *पट्टन, स्थानीय* आदि दूसरे शब्द हैं जिनको कस्बे व नगर के लिए प्रयोग किया गया है।

ऐसा प्रतीत होता है कि *पुर* व *दुर्ग* सबसे पुराने ऐसे शब्द हैं जिनको भारतीय साहित्य में कस्बे या नगर के प्रतीक के रूप में प्रयोग किया गया है। शेष शब्दों का प्रयोग बाद के काल में हुआ। यह हमारे लिए महत्त्वपूर्ण है कि इन दोनों शब्दों का प्रयोग बस्तियों की घेरेबंदी के लिए किया गया है। इसका यह भी तात्पर्य हो सकता है कि राजा और उसके समर्थक घेरेबंद बस्तियों में रहते थे। वे आसपास की बस्तियों से टैक्स वसूल करते थे। उनकी धन संचय व विलासिता की वस्तुओं को एकत्रित करने की क्षमता के कारण व्यापार का फैलाव संभव हो सका। इन किलेबंद बस्तियों की बदौलत विभिन्न संबंधों का जाल-तंत्र की व्यवस्था का विकास हुआ। अंततः इसके कारणवश नगरों का उद्भव हुआ। इस विचार के समर्थन में यह तथ्य भी है कि ब्राह्मणिक परम्परा के अनुसार अनेक नगरों की आधारशिला विशेष राजाओं द्वारा रखी गई। जैसे कि कुशम्ब नाम से जाने वाले राजा ने कौशाम्बी नाम के नगर को बसाया। इसी प्रकार हस्तिन से हस्तिनापुर को बसाया और श्रावास्ता ने श्रावस्ती की आधारशिला रखी। बौद्ध साहित्य में नगरों का संबंध मुनियों, पेड़-पौधों व जानवरों से है। उदाहरण के लिए, कपिलवस्तु को वह नाम कपि मुनि के नाम पर दिया गया। कहा जाता है कि कौशाम्बी को यह नाम उस क्षेत्र में कुशम्ब नाम के वृक्षों के उगने के बाद दिया गया। परन्तु राजाओं द्वारा शहरों की स्थापना की परम्परा ही अधिक महत्त्वपूर्ण है। ऐसा कहा जाता है कि पांडवों ने इंद्रप्रस्थ नाम के नगर को बसाया। ऐसा प्रतीत होता है कि रामायण के काल में भी शासक परिवार के राजकुमारों ने अनेक नगरों को बसाया।

आगामी काल में राजनैतिक केंद्रों में से कुछ काफी बड़े व्यापारिक केन्द्र बन गए। जल्दी ही, ऐसे नगर जो केवल राजनैतिक केंद्र थे, राजनैतिक तथा वाणिज्य केंद्रों से कम महत्त्वपूर्ण हो गए। जैसे कि राजधानी हस्तिनापुर ने कभी भी ऐसी सम्पन्नता को प्राप्त नहीं किया, जैसी कि काशी या कौशाम्बी को प्राप्त थी। जब दूर-दराज के स्थलों से व्यापार काफी बढ़ जाता था तो राजनैतिक लोग व्यापारियों पर कर लगाकर अपने खजाने को सम्पन्न करते थे। कम से कम दो उदाहरण ऐसे हैं जिनमें राजनैतिक राजधानियाँ उन स्थानों में परिवर्तित हो गईं जो महत्त्वपूर्ण व्यापार मार्गों पर स्थित थे। कोशल राज्य की राजधानी को अयोध्या से श्रावस्ती ले जाया गया और मगध राज्य की राजधानी को राजगृह के स्थान पर पाटलिपुत्र को बनाया गया। यह व्यापारिक व्यवस्था के उद्भव के महत्त्व को स्पष्ट करता है जो प्राचीन उत्तरापथ के उस हिस्से में फैला हुआ था जो हिमालय की तलहटी और बाद में तक्षशिला को राजगृह से जोड़ता था। इसी प्रकार, पाटलिपुत्र ऐसी जगह पर स्थित था जहाँ से वह गंगा नदी से गुज़रने वाले व्यापारिक रास्ते का लाभ उठा सकता था। राजाओं तथा व्यापारियों द्वारा दिया जाने वाला संरक्षण ऐसा करण था जिससे कि प्राचीन भारत में नगरों का विकास हुआ। हम काल का साहित्य व्यापारियों के काफिलों के वर्णन से भरा पड़ा है, जो दूर स्थलों पर व्यापार के लिए जाते थे। धनी व्यापारी भी राजाओं के साथ-साथ महात्मा बुद्ध के मुख्य अनुयायी थे।

10.6.2 प्राचीन भारत में नगर की छवि

निम्नलिखित विवरण कुछ बाद के काल के बौद्ध और ब्राह्मणिक साहित्यिक ग्रंथों में आये संदर्भों पर आधारित हैं। *दिव्यावदान* और *धर्म-सूत्र* जैसी पुस्तकें हमें उस समय के नगरों के विषय में जानकारी उपलब्ध कराती हैं। प्राचीन भारतीय साहित्य नगरों की आदर्श छवि प्रस्तुत करता है। *रामायण* में वर्णित अयोध्या या बौद्ध ग्रंथों में वर्णित वैशाली बिल्कुल आदर्श लगेंगे। अगर उनके विवरण का गहराई से अध्ययन किया जाए तो आदर्श रूप में नगरों का वर्णन बिल्कुल शतरंज के बोर्ड की भांति किया गया है। नगरों के चारों ओर किलेबंदी व खाई थी। ऐसी सड़कें थी जिसके नाम बहुत से दस्तकारों के नाम पर थे। नगरों की घेरेबंदी सुरक्षित दीवारों तथा खाइयों द्वारा की गई थी। चौड़ी सड़कें, रंगीन पताकाओं से सुसज्जित ऊँचे भवन, व्यस्त बाजार, फूलों वाले बाग, कमलों व हंसों के साथ पानी से भरे तालाब इस विवरण में आते हैं। पुरुषों की अच्छी वेश-भूषा तथा नाचती व गाती सुन्दर महिलाएँ शहर का चित्रण पूरा करती हैं। आदर्श शहरों का यह असीमित विवरण हमें ऐसा अपर्याप्त विचार देता है जिसके आधार पर प्राचीन भारत के शहरों की वास्तविक स्थिति का बोध नहीं होता। अन्य बिखरे हुए संदर्भों की मदद से नगरों के विषय में हम एक अधिक उचित राय बना सकते हैं।

10.6.3 नगर का भ्रमण

ऐसा प्रतीत होता है कि नदियों के लम्बे मार्गों के किनारों अथवा लम्बे स्थल मार्गों के *संगम* पर नगरों का विकास हुआ। जब आप शहर की सड़कों से गुजरेंगे तब आप क्या पायेंगे? समकालीन ग्रंथ नगरों की जीवन्त छवि प्रस्तुत करते हैं। घोड़ों की टापों से उड़ती धूल के अम्बार और व्यापारियों के काफिले जिनको पवित्र ब्राह्मण बहुत घृणा की दृष्टि से देखते थे। दुकानों के आसपास लोगों की भीड़ चिल्ला-चिल्लाकर खाने की चीजें जैसे कि आम, कटहल, केले, मिसरी, पके चावल आदि की बिक्री करती थी। सस्ते आभूषण, शंख वाले कंगन तथा फूलों को बेचने वाली महिलाओं का कोलाहल एवं कलकल की आवाजें हवा में तैरती रहती थीं। अगर किसी को शराब की ज़रूरत हो तो फिर बहुत से किस्म की शराब की दुकानें मिल जायेंगी। घरों का निर्माण अक्सर मिट्टी व लकड़ी से होता था तथा उसकी खपरैल वाली छत होती थी। इस प्रकार के घरों को गंगा के मैदान के गाँवों में आज भी देखा जा सकता है। कुछ मामलों में घरों का निर्माण पत्थर और पक्की ईंटों से भी किया जाता था। महिलाओं को झरोखों से झांकते हुए देखा जा सकता था। कभी-कभी कोई वेश्याओं के दर्शन भी कर सकता था। अगर कोई जुआ खेलने का शौकीन था तो उसके लिए इसकी भी व्यवस्था थी। राजा और उसकी सेना के हाथियों व रथों पर सवार जलूसों को सड़कों पर निकालते हुए देखा जा सकता था। शहर के कुछ भागों में सेना को धनुर्विद्या सीखते हुए, हाथियों को परीक्षण देते हुए और युद्ध कला में कौशलता को बढ़ाते हुए देखा जा सकता था। गेरूवे व सफेद वस्त्रों को धारण किए साधुओं के झुंड के झुंड नगर में घूमते हुए देखे जा सकते थे और कभी-कभी ये साधु नग्न अवस्था में भी घूमते रहते थे। ये घुमक्कड़ संन्यासी इसी समय में उदित विभिन्न सम्प्रदायों से संबंधित थे और इनको जो उपवन या बाग दिए गए थे उनमें रहते हुए इनको विभिन्न धार्मिक सवालों पर उपदेश देते हुए देखा जा सकता था। श्रोताओं की सभा में विभिन्नता होती थी। कभी-कभी यह सभा केवल धनी व्यापारियों और राजकुमारों की होती थी और कभी-कभी उन लोगों की होती जो समाज के निर्धनतम वर्ग से आते थे। धनी लोग इन सन्यासियों को खुल कर धन देते थे। उपवनों एवं धार्मिक स्थलों पर इन संन्यासियों का पूर्ण अधिकार होता था और ये भी नगर के जीवन का एक अंग थे।

10.6.4 विनिमय की वस्तुएँ

बाजारों में उपयोगी वस्तुओं की बिक्री एवं खरीदारी बड़े पैमाने पर होती थी। लोगों को लोहे, तांबे, टिन व चांदी आदि धातुओं के बने उपकरणों तथा औज़ारों को खरीदते हुए देखा जा

सकता था। नमक के उपार्जन तथा बेचने के विशेषज्ञ व्यापारियों के गुटों को सड़क के उस टुकड़े पर, जो उनको दे दिया गया था, देखा जा सकता था। काशी के सूती कपड़ों की ओर खरीदने वालों की काफी बड़ी संख्या आकर्षित होती थी। उत्तर-पश्चिम गंधार प्रदेश से आने वाले ऊनी कम्बलों को केवल धनी लोग खरीदते थे। सिन्ध और कम्बोज से आयात होने वाले घोड़ों की भी बिक्री की जाती थी। यहाँ पर उन दिनों केवल समाज के उच्च धनी लोग खरीदार होते थे। शंख से बनी चूड़ियाँ, सोने से बने सुन्दर आभूषण, कंघियाँ, हाथी दांत से निर्मित आभूषण और कीमती पत्थरों की बहुत अधिक माँग कुलीन वर्ग में थी।

समकालीन स्रोत इस ओर भी संकेत करते हैं कि प्रत्येक सामान को अलग सड़क पर बेचा जाता था। जो उसका उत्पादन करते थे या उसको लाते थे वही बेचते भी थे। विभिन्न प्रकार के सामानों को बेचने की कोई दुकान नहीं थी। विभिन्न प्रकार के व्यापारी होते थे, जैसे कि दुकानदार (*अपनिक*), खुदरा *(क्रय-विक्रय)* और धन विनियोक्ता *(सेठी-गहपति)*। धनी लोग सिक्कों का उपयोग करते थे। चांदी का सिक्का शतमन अधिकतम मूल्य का था। उसके बाद *कर्षपण* का महत्व था। *कर्षपण* का महत्त्व था। तांबे के माशा और *ककणि* कम मूल्य के सिक्के थे। नगरों की इस चमक-दमक के बीच गरीब लोगों का वह वर्ग था जिसके विषय में कुछ भी नहीं कहा जा सकता है। एक बौद्ध *जातक* कथा में वर्णन है कि एक व्यापारी की बेटी के द्वारा एक चण्डाल (जो लोग जाति व्यवस्था से बाहर थे) को देखने पर प्रदूषण के डर से उसकी आंखों को धोया गया। नगरों के उदय के साथ-साथ धोबियों, मेहतरों, भिखारियों तथा भंगियों का वर्ग भी अस्तित्व में आया। भंगियों और शवों को दफनाने वालों की सेवाएँ शहरों के लिए आवश्यक थीं। फिर भी ये लोग समाज के सबसे निर्धन तथा अधिकार-विहीन लोग थे। जाति व्यवस्था से बहिष्कृत ये लोग नगरों के बाहर अपनी सामाजिक और आर्थिक स्थिति में सुधार की किसी आशा के बिना रहते थे। समुदायिक समाज के पतन और शासकों द्वारा उत्पादन पर बढ़ती हुई माँगों के कारण भिखारियों के गुटों की संख्या बढ़ी। एक कहानी में बताया गया है कि दिन में राजा के लोग गाँव को लूटते थे और रात को लुटेरे।

10.7 पुरातात्विक साक्ष्यों के अनुसार नगर

हमें जो साहित्यिक साक्ष्य उपलब्ध हैं उनमें आगामी शताब्दियों में बहुत से परिवर्तन हुए और उनमें कुछ न कुछ जोड़ा गया। हमें जो लिखित ग्रंथ उपलब्ध हैं वे एक हज़ार वर्ष से भी कम पुराने हैं। इसलिए इन ग्रंथों में से प्रारंभिक काल के इतिहास के विवरण को बाद के काल के विवरण को अलग करना कठिन है। जो सूचनायें हमें उत्खनन से प्राप्त हुई हैं वे इस काल के नगरों के विषय में कुछ अधिक ठोस आधार प्रदान करती हैं। क्योंकि पुरातात्विक आंकड़ों को अधिक निश्चितता के कारण कालबद्ध किया जा सकता है। यह भी है कि साहित्यिक विवरणों में नगरों की ऐश्वर्यता एवं चमक-दमक को बढ़ा-चढ़ाकर लिखा गया है। उत्खनन से प्राप्त सामग्री में इस प्रकार का पूर्वाग्रह नहीं होता है। अब हमें यह देखना है कि उत्खनन से प्राप्त विवरण से किस प्रकार की सूचना प्राप्त हुई है।

700 बी.सी.ई. के लगभग, अयोध्या, कौशाम्बी और श्रावस्ती जैसी छोटी बस्तियाँ अस्तित्व में आईं। इन बस्तियों में रहने वाले लोग विभिन्न प्रकार की मिट्टी के बर्तनों का प्रयोग करते थे। इन मृद्भाण्डों में एक विशेष मृद्भाण्ड जबसे ज्यादा महत्त्वपूर्ण है, वह है चित्रित धूसर मृद्भाण्ड (PGW)। ऊपरी गंगा घाटी में रहने वाले निवासी इसका इस्तेमाल कर रहे थे। मध्य गंगा घाटी के अन्य स्थानों में लोग काले-और-लाल मृद्भाण्ड का प्रयोग कर रहे थे। छठी शताब्दी बी.सी.ई के आसपास इस सारे क्षेत्र के निवासी इस श्रेणी के मृद्भाण्डों के साथ-साथ एक विशेष प्रकार के चमकदार सतह वाले मृद्भाण्डों का उपयोग करने लगे। इस प्रकार के मृद्भाण्ड को उत्तरी काली पालिश वाले मृद्भाण्ड (NBPW) कहते हैं। वह उच्च किस्म के मृद्भाण्ड इस बात का प्रमाण है कि छठी शताब्दी बी.सी.ई. में गंगा घाटी के नगरों में व्यापक

सांस्कृतिक समरूपता थी। शायद इन मृद्भाण्डों का कुछ ही स्थलों पर निर्माण होता था और दूसरे स्थलों को इसका व्यापारियों के द्वारा निर्यात किया जाता था। पुरातात्विक स्थलों पर जो दूसरी वस्तु प्रकट होनी प्रारम्भ होती है वह इस काल के सिक्के हैं। प्राचीन भारत में इस काल में प्रथम बार सिक्कों का प्रयोग होना शुरू हुआ। चांदी और तांबे के सिक्कों का निर्माण होता था और इन सिक्कों को सामान्यतः आहत सिक्के कहा जाता है। इन पर एक ओर विभिन्न प्रकार के प्रतीकों को चिन्हित किया गया है। प्रारम्भ में इन सिक्कों को संभवतः व्यापारियों ने जारी किया। सिक्कों की प्रणाली के लागू हो जाने के कारण संगठित व्यापार को बढ़ावा मिला इसके अलावा, आहत सिक्कों की भांति ढलवा ताम्र-लौह के सिक्कों पर इस समय कुछ नहीं लिखा था।

वस्तु विनिमय व्यवस्था में दो व्यक्ति अपने उत्पाद के माध्यम से विनिमय करते हैं। मानों कि किसी व्यक्ति के पास गाय है जिसके विनिमय से वह भूसा खरीदना चाहता है और एक ऐसा व्यक्ति है जिसके पास भूसा है लेकिन वह भूसे के बदले चावल खरीदना चाहता है। अतः इस मामले में वस्तु विनिमय को लागू नहीं किया जा सकता। जबकि सिक्के, खरीदने और बेचने के लिए एक निश्चित मूल्य के माने जाते थे। कोई भी वस्तु खरीदने के लिए गाय ले जाने की अपेक्षा सिक्कों को ले जाना भी अधिक सरल था। धन प्रणाली के लागू हो जाने के कारण अन्ततः *महाजन* वर्ग का उद्भव हुआ।

इस समय की बड़ी बस्तियों में घर बनाने के लिए पक्की ईंटों का प्रयोग होने लगा था। गंदे पानी के निस्तारण के लिए उपयोग किये जाने वाले एक के ऊपर एक जार या टेराकोटा के छल्ली से बने गड्ढे भी बनाये गये हैं। यह एक नियोजित तरीके की ओर संकेत करते हैं। इससे पहले काल में लोग कच्ची ईंटों से निर्मित झोपड़ियों में रहते थे। बड़े आकार की बस्तियों के भी प्रमाण प्राप्त हुए हैं। इसका अभिप्राय यह हुआ कि आबादी का घनत्व बढ़ रहा था। कुछ स्थानों से नाली तथा मल स्थलों के भी प्रमाण मिले हैं।

आहत सिक्के, कोसल *कर्षपण*, लगभग 525-465 बी.सी.ई.। श्रेय : क्लासिकल न्यूमसमैटिक ग्रुप। स्रोत : विकिमीडिया कॉमन्स (https://en.wikipedia.org/wiki/Karshapana#/media/File:Kosala_Karshapana.jpg)।

उत्खनन से जो सामग्री मिली है उससे स्पष्ट है कि इस काल के लिए साहित्य में नगरों से संबंधित जो विवरण है उसको काफी बढ़ा-चढ़ाकर दिया गया है या फिर वह बाद के समय के नगरों के लिए है। नगरों के विषय में प्राप्त प्रमाणों से सिद्ध नहीं होता कि किसी भी नगर को योजनाबद्ध तरीके से बसाया गया था, जबकि साहित्यिक विवरणों से ऐसा प्रतीत होता है कि इस काल के नगरों को योजनाबद्ध तरीके से बसाया गया था। तक्षशिला शहर के विशाल स्तर पर किए गए उत्खनन से स्पष्ट होता है कि इस नगर को शायद आठवीं-सातवीं शताब्दी

बी.सी.ई में बसाया गया था। योजनाबद्ध नगर बसाने का काम दूसरी शताब्दी बी.सी.ई. में ही अस्तित्व में आया। इसी तरह साहित्य में बार-बार वर्णन आता है कि अयोध्या और वैशाली जैसे नगरों का क्षेत्रफल 30 से 50 वर्ग किलोमीटर था। लेकिन उत्खनन से पता चलता है कि इनमें से कोई भी नगर 4 से 5 वर्ग किलोमीटर क्षेत्रफल से अधिक नहीं था। इसी प्रकार, विशाल महलों एवं चौड़ी सड़कों का वर्णन भी अतिरंजित मालूम होता है। कौशाम्बी के महल की संरचना के अतिरिक्त छठी शताब्दी बी.सी.ई. के अन्य किसी भी महल की संरचना का विवरण नहीं मिलता। अधिकतर घर सामान्य झोंपड़ियों की भांति थे। इस काल का कोई ऐतिहासिक भवन नहीं मिलता। प्रारंभिक काल के अनेक नगरों जैसे कि उज्जैन, कौशाम्बी, राजगृह आदि की किलेबंदी की गई थी। ऐसा लगता है कि युद्ध के भय से किलेबंदी की जाती थी। नगरों की किलेबंदी से यह भी लगता है कि इसके द्वारा नगरीय जनता का आबादी के शेष भाग से स्पष्ट विभाजन हो जाता था। इससे जनता पर राजा सरलता के साथ नियंत्रण कर सकता था। इसके द्वारा साहित्य में वर्णित उस तथ्य की भी पुष्टि होती है जिसमें *पुर* का तात्पर्य बस्ती की किलेबंदी से था और जो प्राचीन भारत में प्रारंभिक नगरीय बस्तियों के रूप थे।

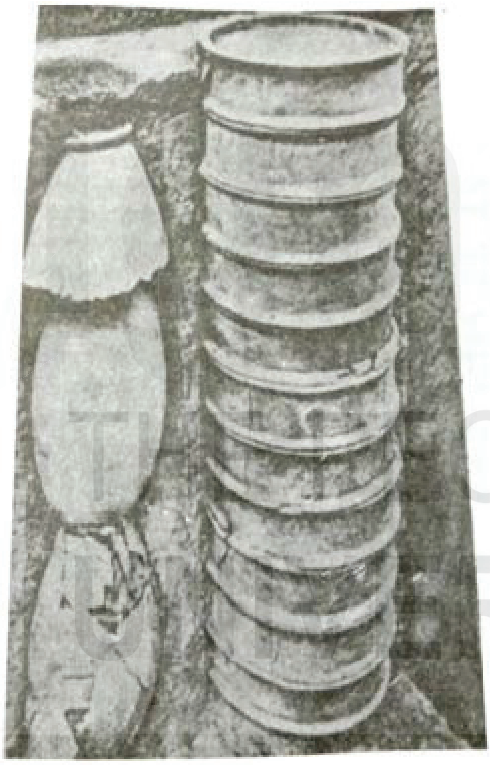

प्राचीन नगरों से प्राप्त पानी सोखने के गड्ढे। स्रोत : ई.एच.आई.-02, खंड-4, इकाई-15।

अब ऐसा विश्वास किया जाता है कि विशाल महलों के साथ सम्पन्न नगर मौर्य काल के दौरान अस्तित्व में आये। हमें जो साहित्य उपलब्ध है उससे ऐसा मालूम पड़ता है कि मौर्य काल के नगरों को स्तर मानकर उससे पूर्व के काल के नगरों का वर्णन किया गया है।

बोध प्रश्न 1

1) सही उत्तरों पर निशान लगाइए :

नगरीकरण के इतिहासकारों के लिए हरिश्चन्द्र की कहानी का महत्त्व निहित है :

क) पुत्र रोहित की अवज्ञा में

ख) सुनेहसेप की खरीदारी में

ग) राजा हरिश्चन्द्र के शहर में नहीं बल्कि गाँव में रहने के तथ्य में

घ) भगवान वरूण तथा इन्द्र द्वारा खेली गई विभिन्न भूमिकाओं में

2) निम्नलिखित कथनों को पढ़िए और सही (✓) या गलत (X) का निशान लगाइए :

   i) आबादी की संख्या और बस्ती के आधार पर ग्रामीण केंद्र से अलग नगर केंद्र की पहचान की जा सकती है।

   ii) लोहे के औज़ारों के बढ़ते प्रयोग ने कृषि उत्पादन को बढ़ाने में मदद की।

   iii) चावल उत्पादक मध्य गंगा-घाटी की तुलना में गेहूँ उत्पादक ऊपरी गंगा घाटी में अधिक खाद्य अनाजों का उत्पादन करती थी।

   iv) लोहे के हथियारों के निर्माण से शासक वर्गों की ताकत में वृद्धि हुई है।

3) समकालीन साहित्य में वर्णित नगरों पर पाँच पंक्तियाँ लिखिए।

....

....

....

....

....

4) पुरातात्विक साक्ष्य नगरों के विषय में क्या बताते हैं? पाँच पंक्तियाँ लिखिए।

....

....

....

....

....

5) निम्नलिखित कथनों को पढ़कर सही (✓) या गलत (X) का चिह्न लगाइए :

   i) जैसे वृक्षों के नाम पर नगरों का नामकरण होता था उसी प्रकार राजाओं के नाम पर भी नगरों के नामकरण की परंपरा थी। ( )

   ii) प्राचीन ग्रंथों से नगरों का पूर्णतया सही विवरण प्राप्त नहीं होता। ( )

   iii) नगरों के अस्तित्व में आने से भिखारियों, भंगियों और अन्य दरिद्र लोगों के गुट समाप्त हो गए। ( )

   iv) सिक्कों की प्रणाली लागू हो जाने से वस्तु विनिमय समाप्त हुआ तथा संगठित व्यापार सुगम हुआ। ( )

10.8 बस्तियों के प्रकार-I : *जनपद*

समकालीन ग्रंथों से सुव्यवस्थित भौगोलिक क्षेत्रों में समाज तथा अर्थव्यवस्था में हो रहे परिवर्तनों की ओर संकेत मिलता है। उस समय के साहित्य में बस्तियों की विभिन्न इकाइयों का उल्लेख मिलता है। इनमें *महाजनपद, जनपद, नगर, निगम, ग्राम* आदि मुख्य हैं। आइए, हम पहले *जनपदों* के विषय में जानकारी प्राप्त करें।

जनपद, जिसका शाब्दिक अर्थ है ''जहाँ लोग अपने पैर रखते हैं'', इस युग में ग्रंथों में अक्सर उल्लेखित है। आपको *जन* का अर्थ याद होगा। वैदिक समाज में इसका अर्थ होता था ''एक कुल के सदस्य''। आरंभिक वैदिक काल में *जन* के सदस्य पशु-पालक समूह होते थे जोकि चारागाहों की तलाश में विचरण किया करते थे। लेकिन उत्तरकालीन वैदिक चरण में *जन* सदस्यों ने खेती करना आरंभ किया और स्थायी रूप से बसने लगे। यह खेतिहर बस्तियाँ

जनपद कहलाती थीं। आरंभिक चरणों में इन बस्तियों का नाम क्षेत्रों में बसे प्रभुत्ववान क्षत्रिय वंशों के नाम पर रखा जाता था। उदाहरण के लिए दिल्ली एवं ऊपरी उत्तर प्रदेश कुरु एवं पांचाल *जनपद* कहे जाते थे, जो प्रभुत्ववान क्षत्रिय वंशों के नाम थे। उनके एक स्थान पर बस जाने पर खेती का विस्तार, विशेषकर लोहे की कुल्हाड़ियों एवं हल के फलों के इस्तेमाल द्वारा आरंभ हो जाता था। इन लोहे के औज़ारों से पूर्व-शताब्दियों के किसानों के ताम्र एवं पत्थर की कुल्हाड़ियों की अपेक्षा अब अधिक सुविधा से जंगलों की सफाई की जा सकती थी तथा खुदाई अधिक गहरी हो सकती थी। मध्य गांगेय घाटी, जो कि प्रयागराज के पूर्व की ओर का क्षेत्र है, धान की फसल के लिए उपयुक्त थी। धान की प्रति एकड़ की उपज की दर गेहूँ की तुलना में कहीं अधिक है। इसके कारण धीरे-धीरे खेती एवं जनसंख्या में बढ़ोत्तरी अवश्यंभावी थी। वंशों के मुखियाओं के पास एक-दूसरे से युद्ध के दौरान बचाव तथा लूट-पाट के लिए काफी कुछ था। अब पशु धन के अतिरिक्त खेतिहर उत्पादन भारी मात्रा में मौजूद था। बलि समारोहों को भव्य रूप देने के उद्देश्य से भी लूट-खसोट की उनकी इच्छाएँ तीव्र होने लगीं थीं। कृषि विस्तार, युद्ध तथा विजया की प्रक्रिया में वैदिक जनजातियाँ एक दूसरे के तथा अनार्य जनसंख्या के सम्पर्क में आईं। इसके कारण विस्तृत क्षेत्रीय इकाइयों का गठन आरंभ हो गया। उदाहरण के लिए पांचाल पाँच छोटी-छोटी जनजातियों के विलय का प्रतिनिधित्व करते थे।

कुछ *जनपद* छठी शताब्दी बी.सी.ई. तक आते-आते *महाजनपदों* के रूप में विकसित हो गए। यह *जनपदों* की आंतरिक सामाजिक-राजनैतिक संरचना में होने वाले निरंतर परिवर्तनों का परिणाम था। इनमें से एक मुख्य परिवर्तन खेतिहर समुदायों का फैलाव था। इसकी जानकारी इस तथ्य से प्राप्त होती है कि समकालीन ग्रंथों में खेतिहर जमीन को महत्त्वपूर्ण सम्पत्ति बताया गया है। इन ग्रंथों में चावलों की किस्मों पर उतने ही विस्तार से व्याख्या की गई है, जितने विस्तार से वैदिक ग्रंथों में गाय की किस्मों पर की गई है। आइए अब हम इन परिवर्तनों की ओर दृष्टिपात करें।

10.9 नए समूहों का उदय

एक अत्यंत महत्त्वपूर्ण परिवर्तन समाज में नई श्रेणियों एवं समूहों का उदय था। आइए इसे विस्तार से देखें।

10.9.1 *गहपति*

गहपति भूसम्पन्न पारिवारिक इकाई का मालिक होता था। कहा जाता है कि एक ब्राह्मण *गहपति* के पास इतनी ज़मीन थी कि उसे ज़मीन की जुताई के लिए पाँच सौ हलों की आवश्यकता होती थी। उत्तर वैदिक समाज में *"विश"* खेतिहर गतिविधियाँ सम्पन्न करता था। भूमि कुल की सामूहिक सम्पत्ति होती थी। खेतिहर समाज के उदय के साथ ज़मीन सम्पत्ति का महत्त्वपूर्ण हिस्सा बन गई। क्षत्रिय एवं ब्राह्मणों के शासक कुलों ने इसे अपने नियंत्रण में कर लिया। इन समूहों से *गहपति* का उदय हुआ जो कि सामूहिक मिलकियत के बिखराव और व्यक्तिगत भूस्वामी के उदय का प्रतीक था। गहपति अपनी ज़मीन पर फसल उगाने का काम *दास, कर्मकार* तथा शूद्रों द्वारा करवाते थे। युद्ध के दौरान बंदी बनाए गए लोग दास बना लिए जाते थे। जनजातियों के गरीब सदस्य भी मज़दूर *(कर्मकार)* बन जाते थे। अशिक्षित मजदूरों का प्रयोग एक ऐसे वंचित वर्ग के उदय का सूचक था जिसका श्रम अतिरिक्त खाद्य उत्पादन के लिए उपयोग किया जाता था। खेतिहर उत्पादन *शूद्र* अथवा *दास* को न मिल कर *गहपति* को मिलता था।

10.9.2 व्यापारी

एक महत्त्वपूर्ण व्यापारी वर्ग का उदय संभवतः *गहपति* वर्ग से ही हुआ। उत्पादनों को बेचकर इन्होंने कुछ धन इकट्ठा कर लिया, जिसे व्यापार के लिए इस्तेमाल किया गया। बौद्ध स्रोतों

में व्यापारियों के लिए एक शब्द, जिसका बार-बार प्रयोग किया गया है, वह *''सेठी'' है* जिसका अर्थ ''जिसके पास सर्वोत्तम हो'' है। इससे यह सिद्ध होता है कि धन का लेन-देन करने वाले व्यक्तियों को समाज में काफी प्रतिष्ठा एवं शक्ति प्राप्त हो गई थी। ब्राह्मणों के ग्रंथों में सामान्यतः व्यापारियों एवं वैश्यों, जोकि व्यापारी वर्ग था, को उपेक्षा की दृष्टि से देखा गया है। छठी शताब्दी तक व्यापार एवं वाणिज्य आर्थिक गतिविधियों का एक स्वतंत्र क्षेत्र बन चुका था। व्यापारी शहरों में रहते थे। इनके उदय को इस काल में कस्बों एवं शहरों के उदय से जोड़ा जा सकता है। यह व्यापारी काफी विस्तृत क्षेत्र में अपना व्यापार फैलाए हुए थे। विभिन्न प्रदेशों में व्यापार फैलाकर इन्होंने यह संभावना तैयार कर दी कि राजा व्यापारियों द्वारा घूमे गए क्षेत्रों को अपने नियंत्रण में करने का प्रयास करें। इस प्रकार छठी शताब्दी बी.सी.ई. तक किसानों एवं व्यापारियों का एक मुक्त वर्ग अस्तित्व में आ गया था। इन्होंने पूर्व स्थिति के विपरीत, स्वयं को कुल के अन्य सदस्यों के साथ अधिशेष खाद्य अथवा धन बाँटे जाने की बाध्यता से मुक्त कर लिया। इस काल में खेती में प्रयुक्त होने वाले मवेशियों, भूमि तथा उसके उत्पादन के रूप में निजि सम्पत्ति एक शक्तिशाली आर्थिक वास्तविकता बन गई।

10.9.3 शासक एवं शासित

सामाजिक-आर्थिक क्षेत्र में विकास के साथ-साथ *महाजनपदों* के राजनैतिक स्वरूप में भी परिवर्तन हुए। पूर्व काल में *राजा* शब्द का प्रयोग कुल के मुखिया के लिए होता था। उदाहरण के लिए, राम जिनकी किंवदंतियाँ इस युग से जोड़ी जाती हैं, बहुधा *रघुकुल* के राजा कहे जाते हैं जिसका अर्थ है वह व्यक्ति जो *रघु कुल* अथवा वंश पर शासन करता हो। इसी प्रकार, युधिष्ठिर कुरु राजा कहे जाते हैं। वे अपने वंशों पर शासन करते थे, किन्तु किसी क्षेत्र पर शासन की संकल्पना अभी तक नहीं उभरी थी। जातियों अथवा नातेदारों से कर वसूली सामान्यतः स्वैच्छिक आधार पर सम्पन्न होती थी। राजा एक उदार पिता-तुल्य व्यक्ति समझा जाता था, जिसका कर्त्तव्य वंश की सम्पन्नता सुनिश्चित करना था। उसके पास स्वतंत्र कर वसूली की व्यवस्था अथवा सेना नहीं होती थी। इसके विपरीत, छठी शताब्दी बी.सी.ई. के स्रोतों में राजाओं का उल्लेख राजा के विशिष्ट क्षेत्र में शासन करने, नियमित कर वसूली की व्यवस्था तथा सेना होने के साथ होता है। किसानों (कृषक) जो राजा को कर देते थे तथा एक सेना का उल्लेख मिलता है। जब किसान तथा सेना किसी भी रूप में राजा के सगोत्र नहीं होते थे। अब राजा तथा प्रजा के बीच भिन्नता स्पष्ट हो चुकी थी। प्रजा में गैर-वंशी समूह भी होते थे। सेना के मौजूद होने का अर्थ स्थानीय किसानों पर बलपूर्वक नियंत्रण तथा पड़ोसी राजाओं एवं जनता से निरंतर झगड़े होते रहना था। पूर्वकालीन मवेशियों के लिए छापामारी के स्थान पर अब संगठित धावे बोलकर क्षेत्रों को हड़प लेना तथा किसानों एवं व्यापारियों से बलपूर्वक कर वसूल करना आरंभ हो चुका था। कर वसूली के लिए नियुक्त कर्मचारियों का उल्लेख बार-बार मिलता है। खेतिहर उत्पादन से *भाग* वसूली के लिए *भगदुध* नाम से एक कर्मचारी होता था। खेतिहर भूमि के सर्वेक्षण के लिए *रज्जुगहक* नाम से एक अन्य कर्मचारी होने का उल्लेख मिलता है। *जातकों* में राजा के अनाज गोदाम में भेजने के लिए राजकर्मियों द्वारा अनाज तोलने का उल्लेख मौजूद हैं। अधिकतर स्थानों पर *महाजनपदों* का नामकरण क्षत्रिय कुल के नाम के आधार पर नहीं होता था। उदाहरण के लिए कोशल, मगध, अवंती तथा वत्स क्षत्रिय वंश के नाम पर आधारित नहीं हैं।

इस प्रकार हम देखते हैं कि छठी शताब्दी बी.सी.ई. तक एक नए प्रकार की राजनैतिक व्यवस्था पनप चुकी थी। पहले जनजाति का मुखिया शत्रु क्षेत्रों पर आक्रमण करके लूट का माल अपने साथियों में बाँट लेता था, लेकिन अब इसके स्थान पर एक राजा आसीन था जिसके पास जाति स्वामिभक्ति से अप्रभावित एक सेना थी। सेना को वेतन किसानों से वसूले गए राजस्व द्वारा किया जाता था। वैदिक मुखियाओं की गौरव एवं बलिदान की इच्छा ने उन्हें वंश परम्परा से अलग कर दिया। जनजातियाँ सुदूर क्षेत्र में युद्ध नहीं कर सकती थी तथा सेना की

आवश्यकता हेतु नियमित कर देना उनके लिए मान्य न होता। राजा के लिए गौरव तथा शक्ति की दृष्टि से यह सब कुछ आवश्यक था। राजा की शक्ति जनजाति के अपने साथियों के बीच धन के बंटवारे पर आधारित नहीं थी। अब राजा की शक्ति संबद्ध वंश समूहों को तोड़ने तथा धनोत्पादन में सक्षम व्यक्तियों एवं समूहों को मान्यता देने पर आधारित थी। इस धन का कुछ हिस्सा कर स्वरूप उत्पादनकर्त्ता से ले लिया जाता था। वंश आधारित समाज में जहाँ कि हर व्यक्ति दूसरे व्यक्ति का संबंधी समझा जाता था, इस प्रकार मुखिया द्वारा मनमाने ढंग से धन ले लेना स्वीकार न किया जाता। अब मुखिया के स्थान पर आसीन राजा किसानों एवं व्यापारियों से कर वसूल करता था तथा उन्हें आंतरिक एवं बाह्य हमलों के विरुद्ध सुरक्षा प्रदान करता था।

बोध प्रश्न 2

1) छठी शताब्दी बी.सी.ई. की भौतिक संस्कृति के विषय में इतिहासकारों ने कि प्रकार पुरातात्विक तथा साहित्यिक प्रमाणों को संयोजित किया है? पाँच पंक्तियों में लिखिए।

....

....

....

....

....

2) इस युग में उभरने वाले प्रत्येक नए समूह पर पाँच पंक्तियाँ लिखें।

....

....

....

....

....

3) निम्नलिखित कथनों को पढ़िए उनके सामने सही (✓) अथवा गलत (X) का चिह्न लगाइए :

   i) छठी शताब्दी बी.सी.ई. के लोग लोहे के इस्तेमाल से अनभिज्ञ थे।

   ii) समकालीन ग्रंथों के अनुसार उस काल के समाज में महत्त्वपूर्ण परिवर्तन नहीं हो रहे थे।

   iii) *जनपद* मूलतः खेतिहर बस्तियाँ थीं, जिनका नामकरण उक्त क्षेत्र के क्षत्रिय वंशों के नाम पर होता था।

   iv) कुछ *महाजनपद* शीघ्र *जनपद* के रूप में विकसित हो गए।

10.10 बस्तियों के प्रकार-II : *महाजनपद*

नई राजनैतिक-भौगोलिक इकाइयाँ, जिनमें *गहपति* व्यापारी तथा शासक एवं शासित के बीच संबंध के नए प्रतिमान दिखाई पड़े, *महाजनपद* कहलाए। *महाजनपद* का तात्पर्य मगध, कोशल आदि के विशाल *जनपदों* से था जिनपर शक्तिशाली राजा अथवा गणसंघ वर्ग राज करते थे। दरअसल छठी शताब्दी बी.सी.ई. में कई *महाजनपद* पूर्व काल में स्वायत्त *जनपदों* को मिलकर बने। उदाहरण के लिए कौशल *महाजनपद* में शाक्य, काशी तथा मगध *महाजनपद* में इसके

साम्राज्य बनने से भी पहले अंग, वज्जी आदि *जनपद* शामिल हो चुके थे। समकालीन बौद्ध ग्रंथों में नए समाज का प्रतिबिंबन जीवक की कथा में देखा जा सकता है। इतिहासकार इन कथाओं को उस युग के मानवों की आशाओं, अभिलाषाओं, संबंधों तथा सामाजिक माहौल को समझने के लिए पढ़ते हैं।

10.10.1 जीवक की कथा

प्रसिद्ध वैद्य जीवक की कथा हमें बुद्ध के समय से प्राप्त होती है। राजगृह (राजगीर, आज का पटना) शहर में अभय नामक राजकुमार रहता था। उसने सड़क पर एक परित्यक्त शिशु देखा। वह उसे घर ले आया और दाई को बच्चे की देखभाल करने का आदेश दिया। बच्चे का नाम जीवक पड़ा।

जब जीवक बड़ा हुआ तो उसने सोचा कि जीविका के लिए उसे क्या करना चाहिए। उसने वैद्य बनने का निर्णय लिया। उन दिनों तक्षशिला शिक्षा का प्रसिद्ध केंद्र हुआ करता था। जीवक ने आयुर्वेद सीखने के लिए वहाँ जाने का निर्णय लिया।

जीवक तक्षशिला में सात वर्षों तक रहा। वहाँ उसने प्रसिद्ध आयुर्वेदविद् की देख-रेख में गहन अध्ययन किया। शिक्षा के अन्त में उसके गुरु ने उसकी परीक्षा लेनी चाही। उसने जीवक से कहा कि वह तक्षशिला के चारों ओर घूमकर कुछ ऐसी जड़ी-बूटियाँ लाए जोकि दवाओं के किसी काम की न हो। जीवक ने जाकर बड़ी सावधानीपूर्वक ऐसी जड़ी-बूटियाँ ढूंढ़नी शुरू की, जो कि दवाओं की दृष्टि से बेकार हो। उसके वापस आने पर उसके गुरु ने उससे पूछा, ''तुम्हें कितनी जड़ी-बूटियाँ मिलीं?'' जीवक ने कहा, ''श्रीमान मुझे एक भी ऐसी जड़ी-बूटी नहीं मिली जो किसी औषधि के काम न आ सके।'' गुरु अति प्रसन्न हुए और कहा कि उसकी शिक्षा अब पूरी हो गई है।

जीवक राजगृह की ओर चल पड़ा। अभी वह रास्ते तक ही पहुँचा था कि उसका सारा धन समाप्त हो गया। वह काम खोजने में लग गया। उसे पता चला कि एक धनी व्यापारी की पत्नी पिछले सात वर्षों से काफी बीमार है। जीवक ने उसे ठीक कर दिया। व्यापारी ने जीवक को काफी सारा धन दिया। इस प्रकार जीवक राजगृह पहुँचा। राजगृह में राजा बिम्बसार का निजी वैद्य बन गया। बिम्बसार जीवक की विद्या से इतना प्रभावित हुआ कि वह जीवक को बुद्ध के इलाज के लिए भेजने लगा। इस प्रकार जीवक बुद्ध के संपर्क में आया। उसने बौद्ध भिक्षुओं को काफी भेंट दी।

अब आप इस कथा-सार को आरंभिक वैदिक समाज के घटनाक्रम से तुलना कीजिए। मवेशी पालने, बलि चढ़ाने तथा पुरोहितों का कहीं उल्लेख नहीं है। कहानी विकसित शहरी बस्तियों की ओर संकेत करती है तथा कथा के मुख्य पात्र हैं एक बच्चा जो कि वैद्य बनना पसंद करता है, व्यापारी *(श्रेष्ठिन)*, एक राजा (बिम्बसार) तथा नए दर्शन का प्रवक्ता बुद्ध। आप भौगोलिक क्षेत्र पर दृष्टि डालें तो पाएँगे कि आरंभिक वैदिक आर्य चारागाहों की तलाश में पंजाब के मैदानों में भटक रहे थे। जीवक बिहार से लेकर उत्तर-पश्चिमी पंजाब की सीमा तक यात्रा करता है। इसका अर्थ यह हुआ कि आयुर्वेद विद्या सीखने के लिए उसने दो हज़ार किलोमीटर से अधिक रास्ता तय किया। नई बस्तियाँ, नए व्यवसाय तथा नए मार्ग परिवर्तित ऐतिहासिक परिस्थिति के प्रतिमान हैं।

जीवक बस्तियों की एक नई व्यवस्था, शहर में रहा। शहर सम्पन्न गाँवों के आधार पर उदित हुए। गाँव *महाजनपदों* के सामाजिक-राजनैतिक संगठन की मूल इकाई थे। अतः आइए अब हम छठी शताब्दी बी.सी.ई. के गाँवों पर एक दृष्टि डालें।

10.10.2 गाँव

महाजनपदों में मूल बस्तियों की इकाइयाँ गाँव थी (जो कि पाली एवं प्राकृत में संस्कृति के *ग्राम* शब्द का समानार्थी है और इसका अर्थ भी गाँव है)। आपको आरंभिक वैदिक युग के ग्राम याद होंगे। यह ग्राम लोगों की चलती-फिरती इकाइयाँ होती थीं और जब दो गाँव पास पहुँच जाते थे तो संग्राम (जिसका शाब्दिक अर्थ गाँवों का एक दूसरे के पास आना है) अथवा युद्ध होता था। चलती-फिरती इकाइयाँ होने के कारण जब दो शत्रुता रखने वाले ग्राम मिलते थे तो एक-दूसरे के मवेशी छीनने के प्रयास करते थे। छठी शताब्दी बी.सी.ई. के गाँव ऐसी मानवीय बस्तियाँ थीं, जहाँ के लोग खेती करते थे (यह पशुपालन से खेतिहर समुदाय में परिवर्तन की ओर संकेत करता है)। गाँव छोटे और बड़े, दोनों ही प्रकार के होते थे, जहाँ एक परिवार भी बस सकता था और कई परिवार एक साथ भी। ऐसा प्रतीत होता है कि परिवार एक ही गोत्र से जुड़े होते थे और सारा गाँव एक-दूसरे से नातेदारी से जुड़ा होता था। किन्तु बड़े पैमाने पर ज़मीन रखने वाले परिवारों के उदय तथा उनके दास, *कर्मकार* तथा *पोरिस* रखने के साथ ही गैर-सगोत्री गाँव अस्तित्व में आए। भूस्वामित्व एवं विभिन्न प्रकार के काश्तकारी अधिकार के भी उल्लेख मिलते हैं। *कसक* तथा *क्षत्रिका* शब्दों का प्रयोग *शूद्र* जाति के आम किसानों के लिए होता था। ग्राम नेता *गामिणी* कहे जाते थे। सिपाहियों, हाथियों तथा अश्व प्रशिक्षकों एवं मंच प्रबंधकों को भी गामिणी कहा जाता था। शिल्प में विशेषज्ञता में वृद्धि के प्रमाण गाँवों के पशु-पालकों, लोहारों तथा लकड़हारों के गाँवों के उल्लेखों से प्राप्त होते हैं। कृषि के अतिरिक्त अन्य कलाओं में गाँवों द्वारा विशिष्ट कौशल प्राप्त करना बढ़ते हुए व्यापार तथा सम्पन्न अर्थव्यवस्था का सूचक है। इसका कारण यह है कि जो ग्रामीण स्वयं अन्न नहीं उगाते थे, वे अन्य ग्रामीणों से अन्न प्राप्त करते रहे होंगे। इसका अर्थ यह हुआ कि वस्तुओं का परस्पर विनिमय जन-साधारण के आर्थिक जीवन का अभिन्न अंग बन चुका था। कलाओं में उनकी विशिष्ट दक्षता से भी इस दिशा में संकेत मिलता है कि उन शिल्पकारों द्वारा उत्पादित वस्तुओं की काफी माँग रही होगी।

10.10.3 कस्बे और शहर

इस काल में कई प्रकार की बस्तियों के रूप में राजाओं तथा व्यापारियों द्वारा नियंत्रित किन्तु विजातीय जनसंख्या वाले कस्बों एवं शहरों का उदय हुआ। यह इकाइयाँ *पुर, निगम* तथा *नगर* के रूप में अलग-अलग प्रकार से उल्लेखित की जाती रही हैं। इन बस्तियों के बीच अंतर स्पष्ट नहीं है। यह कस्बे और शहर गाँवों की अपेक्षा काफी बड़े हुआ करते थे। समकालीन साहित्य में अयोध्या तथा वाराणसी जैसे शहरों का उल्लेख मिलता है, जिनका क्षेत्रफल तीस वर्ग किलोमीटर से पचास वर्ग किलोमीटर के बीच बताया गया है। यह तथ्य बढ़ा-चढ़ाकर बताए गए हैं क्योंकि इन शहरों की खुदाई से इस काल में साधारण बस्तियाँ होने की जानकारी मिलती है। किसी भी काल में यह क्षेत्रफल पाँच वर्ग किलोमीटर से अधिक नहीं था। इतिहास के इस चरण को उत्तर काले पॉलिश किए मृद्भाण्ड जैसे उत्कृष्ट बर्तनों का इस्तेमाल करने वाली इन बस्तियों से है। इन बस्तियों में व्यापार तथा जनसंख्या में निरंतर वृद्धि होती रही। कौशाम्बी, उज्जैनी, राजघाट (वाराणसी) तथा राजगीर शहरों के चारों ओर सख्त किलेबंदी के प्रमाण मिले हैं। साहित्य में मिले उल्लेखों से यह स्पष्ट हो जाता है कि शहरों का उदय शक्ति के केंद्र तथा *महाजनपद* पर नियंत्रण के रूप में परिलक्षित हुआ। राजा शहरों से शासन करते थे। नवोदित व्यापारी वर्ग, विशेषकर सिक्के का प्रयोग आरंभ होने के बाद, इन्हीं केंद्रों में रहकर व्यापार नियंत्रित करते थे।

10.11 सोलह *महाजनपद*

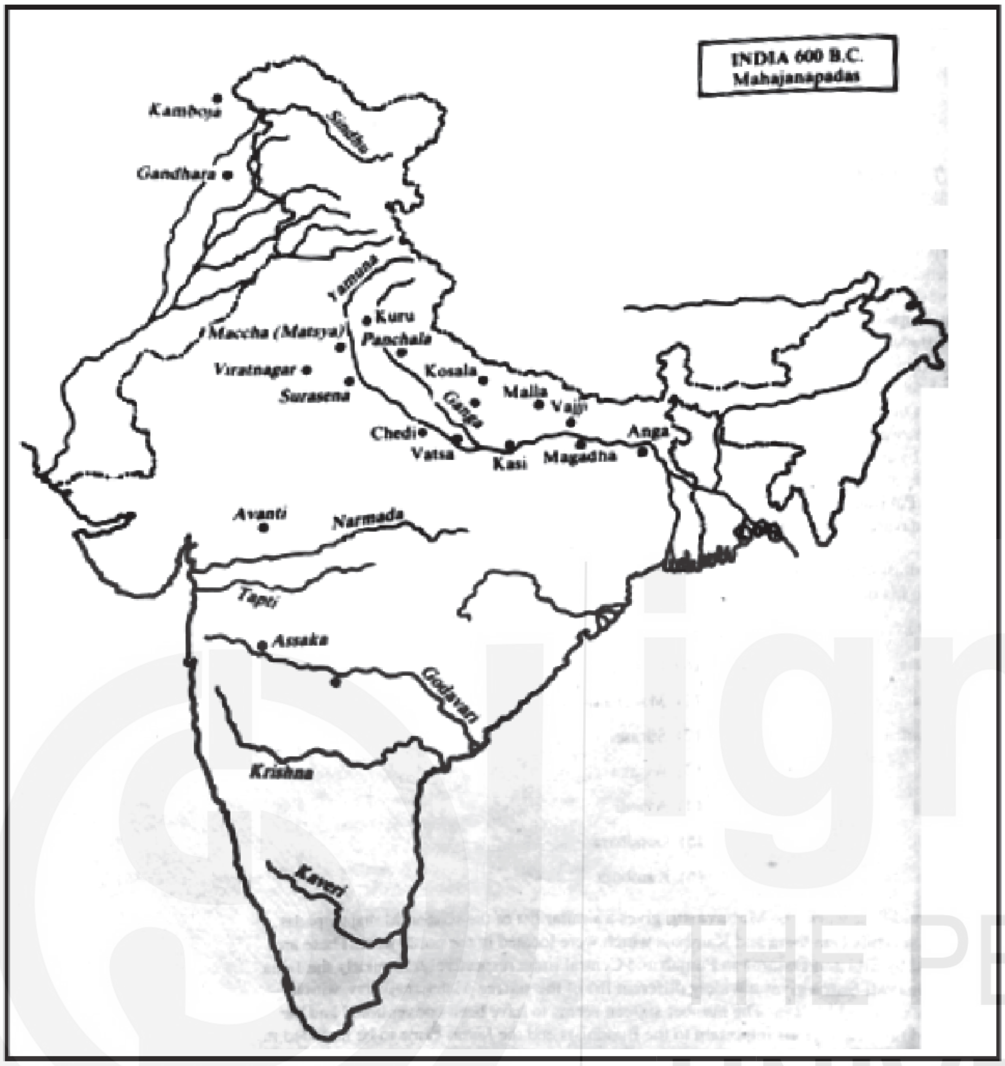

महाजनपद। स्रोत : ई.एच.आई.-02, खंड-4, इकाई-14।

पिछले उप-भाग में हमने छठी शताब्दी में विद्यमान बस्तियों की मूल इकाईयों के साहित्यिक तथा पुरातात्विक प्रमाणों पर चर्चा की। अब हम प्राचीन साहित्य में सोलह *महाजनपदों* के उल्लेखों की चर्चा करेंगे। बौद्ध ग्रंथों में बुद्ध के समय में सोलह *महाजनपदों* के मौजूद होने के उल्लेख मिलते हैं। बौद्ध ग्रंथों में जहाँ भी बुद्ध का उल्लेख आता है वहाँ बार-बार इन *महाजनपदों* की मुख्य बस्तियों का भी उल्लेख मिलता है। इतिहासकारों में बुद्ध के जीवन-काल की तिथियों के प्रति अभी भी मतभेद है। तथापि, यह माना जाता है कि बुद्ध छठी तथा पाँचवीं शताब्दी बी.सी.ई. की दोनों शताब्दियों के कुछ भाग में जीवित थे। इसीलिए बौद्ध ग्रंथों में बुद्ध के जीवनकाल के उल्लेखों को इस युग के समाज के प्रतिबिंबन के उद्देश्य से देखा जाता है। *महाजनपदों* की सूची हर ग्रंथ में अलग है। इन विभिन्न सूचियों से हमें भारत के विभिन्न क्षेत्रों की राजनैतिक एवं आर्थिक दशा पर काफी जानकारी प्राप्त होती है। यह *महाजनपद* हज़ारों गाँव और कुछ शहरों के विलय का प्रतिनिधित्व करते हैं। यह सोलह *महाजनपद* उत्तरी-पश्चिमी पाकिस्तान से लेकर पूर्वी बिहार तक तथा हिमालय के तराई क्षेत्रों से दक्षिण में गोदावरी नदी तक फैले हुए थे।

बौद्ध ग्रंथ *अंगुत्तर निकाय* जो कि *सुत्त पिटक* का एक भाग है, बुद्ध के समय निम्नलिखित *महाजनपद* होने का उल्लेख करता है :

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

1)	काशी	7)	चेदि	12)	सुरसेन
2)	कोशल	8)	वत्स	13)	अस्सक
3)	अंग	9)	कुरू	14)	अवंति
4)	मगध	10)	पाँचाल	15)	गंधार
5)	वज्जि	11)	मच्छ (मत्स्य)	16)	कंबोज
6)	मल्ल				

एक अन्य बौद्ध स्रोत, *महावस्तु* में सोलह *महाजनपदों* की ऐसी ही सूची मिलती है। लेकिन इसमें गंधार तथा कंबोज, जो कि उत्तर-पूर्व में स्थित थे, का नाम नहीं है। इसके स्थान पर पंजाब में सिबी तथा मध्य भारत में दर्शन के नाम जोड़े गए हैं। इसी प्रकार जैन ग्रंथ *भगवती सूत्र* सोलह *महाजनपदों* की भिन्न सूची का उल्लेख करता है जिसमें वंग तथा मलय शामिल हैं। सोलह की संख्या पारंपरिक प्रतीत होती है तथा सूची में भिन्नता का कारण यह है कि बौद्ध और जैनों ने अपने-अपने महत्त्व के क्षेत्रों को सूची में शामिल किया होगा। सूचियों से पता चलता है कि मध्य गांगेय घाटी धीरे-धीरे केंद्रीयता प्राप्त कर रही थी क्योंकि अधिकतर *महाजनपद* इन्हीं क्षेत्रों में स्थित थे। आइए इन *महाजनपदों* के इतिहास एवं भूगोल पर एक दृष्टि डालें।

1) काशी

सोलह *महाजनपदों* में से काशी आरंभ में सबसे शक्तिशाली *महाजनपद* प्रतीत होता है। आज के वाराणसी जिले में तथा उसके समीपवर्ती क्षेत्रों में स्थित इस *महाजनपद* की राजधानी वाराणसी को, जो गंगा तथा गोमती के *संगम* पर स्थित है, भारत का सबसे मुख्य शहर बताया है।

यहाँ की भूमि अत्यधिक उपजाऊ थी। काशी सूती कपड़ों तथा घोड़ों के बाजार के लिए विख्यात था। बनारस के रूप में पहचाने गए राजघाट स्थान की खुदाई में छठी शताब्दी बी.सी.ई. में शहरीकरण के कोई प्रभावपूर्ण प्रमाण नहीं मिले हैं। एक मुख्य नगर के रूप में इसका उदय 450 बी.सी.ई. के आस-पास हुआ होगा। फिर भी बौद्ध भिक्षुओं के गेरुए वस्त्र जिन्हें संस्कृत में काशय कहा जाता था, काशी में बनाए जाते थे। इससे बुद्ध के समय में काशी के कपड़ा उत्पादक केंद्र और बाजार के रूप में उदित होने का संकेत मिलता है।

काशी के कई राजाओं द्वारा कौशल एवं अन्य राज्यों पर विजय प्राप्त करने के उल्लेख मिलते हैं। रुचिकर प्रसंग यह है कि राम की कहानी का प्राचीनतम् वृतांत *''दशरथ जातक''* दशरथ, राम आदि को अयोध्या के बजाए काशी का राजा उल्लिखित करता है। जैन सम्प्रदाय के तेइसवें गुरु (तीर्थंकर) पार्श्व के पिता को बनारस का राजा बताया गया है। बुद्ध ने अपना पहला उपदेश बनारस के निकट सारनाथ में दिया। इस प्रकार, प्राचीन भारत के तीनों मुख्य धर्म अपना सम्बन्ध बनारस से जोड़ते हैं। लेकिन बुद्ध के काल तक कोशल ने काशी *महाजनपद* पर कब्जा कर लिया था और काशी, मगध एवं कोशल के बीच युद्ध का कारण बना हुआ था।

2) कोशल

कोशल *महाजनपद* पश्चिम में गोमती से घिरा हुआ था। इसके पूर्व में सदनीर नदी बहती थी, जो इसे विदेह *जनपद* से अलग करती थी। इसके उत्तर में नेपाल की पहाड़ियाँ तथा दक्षिण में स्यनदिका नदी बहती थी। साहित्यिक प्रमाण बताते हैं कि कोशल का उदय कई छोटी-छोटी इकाइयों एवं वंशों के सामंजस्य से हुआ। उदाहरण के लिए हम जानते हैं कि कपिलवस्तु के शाक्य कौशल के नियंत्रण में थे। *मज्झिम निकाय* में बुद्ध स्वयं को कोशल का निवासी बताते हैं। इसके साथ ही यह भी माना जाता है कि कोशल के राजा विदुधब ने शाक्यों

को नष्ट कर दिया था। जिसका अर्थ यह हुआ कि शाक्य वंश कोशल के नाममात्र नियंत्रण में था। नवोदित राजतंत्र ने केंद्रीकृत नियंत्रण स्थापित करके शाक्यों की स्वायत्तता नष्ट कर दी थी। छठी शताब्दी बी.सी.ई. में मगध के शासकों में जिन राजाओं का उल्लेख है वे हिरण्यनभ, महाकोशल, प्रसेनजित तथा सुद्रोदन हैं। इन राजाओं के बारे में अयोध्या, साकेत, कपिलवस्तु अथवा श्रावस्ती से शासन करने का अनुमान है। संभवतः छठी शताब्दी बी.सी.ई. के आरंभ में कोशल का नियंत्रण कई छोटे-छोटे कबीलायी सरदारों के हाथ में था जो छोटे-छोटे कस्बों में शासन करते थे। छठी शताब्दी बी.सी.ई. के अंतिम वर्षों में प्रसेनजित तथा विदुधब जैसे राजाओं ने सभी अन्य कबीलाई सरदारों को अपने नियंत्रण में कर लिया। ये श्रावस्ती से शासन करते थे। इस प्रकार तीन बड़े शहरों – अयोध्या, साकेत तथा श्रावस्ती – को अपने नियंत्रण में लेकर कोशल एक सम्पन्न राज्य हो गया। कोशल ने काशी तथा उसके क्षेत्र पर भी कब्जा कर लिया। कोशल के राजा ब्राह्मणवाद तथा बौद्ध मत, दोनों को प्रोत्साहन देते थे। राजा प्रसेनजित बुद्ध का समकालीन तथा मित्र था। परवर्ती चरण में कोशल उदीयमान मगध साम्राज्य का सबसे कट्टर शत्रु बन गया।

3) अंग

अंग में दक्षिण बिहार के भागलपुर तथा मुंगेर जिले शामिल थे। संभव है कि इसका विस्तार उत्तर की ओर कोसी नदी तक हुआ हो और इसमें पुर्णिया जिले के कुछ भाग भी जुड़ गए हों। वह मगध के पूर्व तथा राजमहल पहाड़ियों के पश्चिम में स्थित था। अंग की राजधानी चम्पा थी। यह गंगा तथा चम्पा नदी के *संगम* पर स्थित थी। चम्पा छठी शताब्दी बी.सी.ई. के छः महान नगरों में से एक था। यह अपने व्यापार एवं वाणिज्य के लिए विख्यात था तथा व्यापारी यहाँ से सुदूर पूर्व गंगा पार करके जाते थे। छठी शताब्दी के मध्य में अंग को मगध ने हड़प लिया। भागलपुर के निकट चम्पा में खुदाई के दौरान उत्तरी काले पॉलिश किए मृद्भाण्ड भारी मात्रा में मिले हैं।

4) मगध

मगध दक्षिणी बिहार में पटना तथा गया कि निकटवर्ती क्षेत्रों में स्थित था। इसके उत्तर तथा पश्चिम में क्रमशः सोन तथा गंगा नदियाँ थीं। पूर्व में यह छोटा नागपुर के पठार तक फैला हुआ था। इसके पूर्व की ओर चम्पा नदी बहती थी, जो इसे अंग से अलग करती थी। इसकी राजधानी गिरिव्रज अथवा राजगृह कहलाती थी। राजग्रह पाँच पहाड़ियों से घिरा अमेध शहर था। राजगृह की दीवारें भारत के इतिहास में किलेबंदी का प्राचीनतम उदाहरण है। पाँचवीं शताब्दी बी.सी.ई. के आस-पास राजधानी पाटलिपुत्र स्थानांतरित कर दी गई। इन पर आरंभिक मगध राजाओं की शक्ति की छाप है। ब्राह्मणीय ग्रंथों में मगध की जनता को मिश्रित तथा हीन श्रेणी का बताया गया है। इसका कारण संभवतः यह है कि पूर्व ऐतिहासिक युग में यहाँ के निवासी *वर्ण* व्यवस्था तथा ब्राह्मणीय अनुष्ठान के अनुयायी नहीं थे। इसके विपरीत, इस क्षेत्र में बौद्ध मत का काफी महत्त्व था। बुद्ध को ज्ञान की प्राप्ति इसी क्षेत्र में हुई। राजगृह बुद्ध के प्रिय पड़ाव स्थलों में से एक था। मगध के राजा बिम्बिसार तथा अजातशत्रु उनके मित्र तथा शिष्य थे। तराई चावल की खेती के लिए उपयुक्त उपजाऊ खेतिहर ज़मीन, दक्षिणी बिहार में कच्चे लोहे के भंडारे पर नियंत्रण तथा अपेक्षाकृत खुली सामाजिक व्यवस्था की पृष्ठभूमि ने मगध को उत्तरकालीन इतिहास में सबसे महत्त्वपूर्ण राज्य के रूप में प्रस्तुत किया है। गंगा, गंडक तथा सोन नदी के व्यापार मार्गों पर इसके नियंत्रण के कारण इसे काफी राजस्व प्राप्त हो जाता था। कहा जाता है कि मगध के राजा बिम्बिसार ने 80,000 गाँवों के *गामिनियों* की एक सभा बुलाई थी। हो सकता है कि संख्या बढ़ा-चढ़ाकर बताई गई हो, लेकिन इससे यह पता लगता है कि बिम्बिसार के प्रशासन में गाँव संगठन की इकाई के रूप में उभर आए थे। *गामिनी* उसके नातेदार नहीं बल्कि गाँवों के मुखिया तथा प्रतिनिधि थे। इस प्रकार उसकी शक्ति उसके संबंधियों की कृपा पर आधारित नहीं थी। अजातशत्रु ने सिंहासन

पर कब्ज़ा करके बिम्बिसार को यातना देकर मार डाला। वैशाली के वज्जि पर मगध के नियंत्रण का विस्तार होने के साथ एक साम्राज्य के रूप में मगध की सम्पन्नता बढ़ती गई। इसकी परिणति चौथी शताब्दी बी.सी.ई. में मौर्य साम्राज्य के रूप में हुई।

5) **वज्जि**

बिहार के वैशाली जिले के आस-पास बसा वज्जि (जिसका शाब्दिक अर्थ पशु-पालक समुदाय है) गंगा के उत्तर में स्थित था। यह *महाजनपद* उत्तर में नेपाल की पहाड़ियों तक फैला हुआ था। गंडक नदी इसे कोशल से अलग करती थी। पूर्व उल्लेखित *महाजनपदों* के विपरीत वज्जियों का राजनैतिक संगठन भिन्न था। समकालीन ग्रंथों में उन्हें गणसंघ कहा जाता था। जिसकी व्याख्या गणतंत्र या कुल तंत्रीय राज्य के रूप में की गई है। इस युग के गणसंघ किसी एक सर्वशक्तिमान राजा द्वारा शासन का प्रतिनिधित्व नहीं करते थे बल्कि यह शासन क्षत्रिय सरदारों द्वारा संयुक्त रूप से होता था। यह शासक वर्ग, जिसके सदस्य राजा कहे जाते थे, अब गैर-क्षत्रिय समूहों से पृथक् हो गए।

वज्जि आठ कबीलों के संगठन का प्रतीक थे, जिनमें विदेह, लिच्छवी, ज्ञनात्रिक मुख्य हैं। विदेहों की राजधानी मिथिला थी। इसे नेपाल का आधुनिक जनकपुर माना जाता है। यद्यपि रामायण में इसे राजा जनक के साथ जोड़ा गया है, बौद्ध स्रोतों में इसे कबीलायी परंपरा से जोड़ा गया है। प्राचीन भारतीय गणसंघों में सर्वाधिक विख्यात, लिच्छवियों की राजधानी वैशाली थी। वैशाली के एक विशाल एवं सम्पन्न शहर होने का अनुमान है। एक अन्य कबीले के रूप में ज्ञनात्रिक वैशाली के उपनगरों की बस्तियों में रहते थे। इसी कबीले में जैन गुरु महावीर का जन्म हुआ। संगठन के अन्य समुदाय उग्र, भोग, कौरव तथा ऐक्षावक थे। वैशाली संभवतः पूरे संगठन का केंद्र था। वे अपने मामले आपसी सभाओं में तय करते थे। एक *जातक* कथा के अनुसार वज्जियों पर अनेक वंशों के सरदार शासन करते थे। छठी शताब्दी बी.सी.ई. में यह *महाजनपद* एक महत्त्वपूर्ण शक्ति बना हुआ था। लेकिन इनके पास न तो सेना थी और न ही इनके पास कृषि राजस्व प्राप्त करने की कोई व्यवस्था थी। माना जाता है कि मगध के राजा अजातशत्रु में इस संगठन को नष्ट कर दिया था। अपने मंत्री वस्सकर की सहायता से उसने वंश के सरदारों में बैर का बीज बोया और उसके बाद लिच्छिवियों पर आक्रमण कर दिया।

6) **मल्ल**

प्राचीन ग्रंथों में उल्लेखित मल्ल एक अन्य क्षत्रिय वंश थे। यह एक गणसंघ था। इस वंश की विभिन्न शाखाएँ थीं, जिनमें से दो का मूल स्थान पावा तथा कुशीनगर था। कुशीनगर उत्तर प्रदेश के गोरखपुर जिले में कसिया क्षेत्र को माना गया है। पावा के क्षेत्र के संबंध में विद्वानों में मतभेद हैं। मल्ल का क्षेत्र शाक्य क्षेत्र के दक्षिण पूर्व तथा पूर्व की ओर स्थित था। अनुमान है कि मल्लों पर पाँच हज़ार कबीलायी सरदारों का शासन रहा होगा। बुद्ध की मृत्यु कुशीनगर के निकट हुई और मल्लों ने ही उनका अंतिम संस्कार किया।

7) **चेदि**

चेदि क्षेत्र आधुनिक बुंदेलखंड के पूर्वी भागों के आस-पास था। संभव है इसका विस्तार मालवा पठार तक हो गया हो। कृष्ण का प्रसिद्ध शत्रु शिशुपाल चेदियों का शासक था। महाभारत के अनुसार, चेदि चंबल के पार मत्स्य, बनारस के काशियों तथा सोन नदी की घाटी में करूषों के निकट संपर्क में थे। इसकी राजधानी सोथीवती (सुक्तिमति) संभवतः उत्तर प्रदेश के बांदा जिले में स्थित थी। इस क्षेत्र के अन्य मुख्य नगर सहजति तथा त्रिपुरी थे।

8) **वत्स**

वत्स, जिसकी राजधानी कौशाम्बी थी, छठी शताब्दी बी.सी.ई. का सबसे शक्तिशाली केंद्र था।

प्रयागराज के निकट यमुना के तट पर बसा कौशाम्बी आधुनिक कोसम के रूप में जाना जाता है। इसका अर्थ यह हुआ कि वत्स आधुनिक प्रयागराज के आस-पास बसे होंगे। *पुराणों* के अनुसार, पांडवों के वंशज निचंक्षु ने हस्तिनापुर का बाढ़ में बह जाने के बाद अपनी राजधानी कौशाम्बी में बना ली। नाटककार भास ने अपने नाटकों के द्वारा वत्सों के एक राजा, उदयन को अमर बना दिया। यह नाटक उदयन तथा अवंति की राजकुमारी वासवदत्ता के बीच प्रेम संबंध की कहानी पर आधारित है। इनमें मगध, वत्स और अवंती जैसे शक्तिशाली राज्यों के बीच टकराव का भी उल्लेख मिलता है। ऐसा प्रतीत होता है कि इन *संघर्षों* में वत्स की पराजय हुई क्योंकि बाद के ग्रंथों में वत्स को अधिक महत्त्व नहीं दिया गया।

9) कुरू

ऐसा विश्वास है कि कुरु के राजा युधिष्ठिर के परिवार से संबंध रखते थे। वे दिल्ली-मेरठ के आस-पास स्थित थे। *अर्थशास्त्र* तथा अन्य ग्रंथों में उन्हें राजशब्दोपजिविनह अर्थात् राजा की पदवी रखने वालों की संज्ञा दी गई है। इससे कबीलायी वंशों को विसरित संरचना की ओर संकेत मिलता है। क्षेत्र में इनके संपूर्ण एकाधिकार की अनुपस्थिति के प्रमाण इसी क्षेत्र में कई राजनैतिक केंद्रों के उल्लेख से भी मिलते हैं। हस्तिनापुर, इंद्रप्रस्थ, इशुकर में से प्रत्येक कुरूओं की राजधानी के रूप में उल्लेखित किए गए हैं। इनमें से प्रत्येक का अपना शासक था।

हम कुरुओं के विषय में महाकाव्य महाभारत के द्वारा परिचित हैं। यह पाण्डवों तथा कौरवों के बीच उत्तराधिकार के युद्ध की गाथा है। प्रेम, युद्ध, शड्यंत्र, घृणा तथा मानवीय अस्तित्व के बहुत दार्शनिक मुद्दों पर अपने उत्कृष्ट विवरणों के कारण यह महाकाव्य पीढ़ियों से भारतीय जन-साधारण को रोमांचित करता रहा है। इतिहासकार इस महाकाव्य को घटनाओं के वास्तविक विवरण के बजाय एक साहित्यिक महाकाव्य के रूप में देखते हैं। बड़े पैमाने पर युद्ध *महाजनपदों* के उदय के बाद ही आरंभ हुए। इससे पूर्व के चरण में यह केवल मवेशी हाँक ले जाने तक सीमित था। महाभारत में यूनानियों का भी उल्लेख है जो कि भारत के संपर्क में पाँचवीं शताब्दी बी.सी.ई. के बाद ही आए। अतः यूनानियों के साथ युद्ध की संभावना केवल लगभग प्रथम सताब्दी बी.सी.ई. में ही हो सकती थी। सहस्राब्दी संभवतः महाभारत की कहानी दो क्षत्रिय वंशों के आपसी युद्ध की कहानी है, जो कि भाटों की गायन परंपरा का एक हिस्सा बन गयी। आरंभिक ऐतिहासिक युग की शुरुआत के साथ *महाजनपदों* में आपस में सामाजिक, आर्थिक तथा राजनीतिक सम्पर्क बढ़ा। भाटों तथा ब्राह्मणों ने भारत के प्रत्येक क्षेत्र को महाभारत की कथा में शामिल कर लिया। इससे राजे-रजवाड़े यह सोचकर गर्व का अनुभव कर सकते थे कि उनके पूर्वज महाभारत युद्ध में लड़े थे। इस प्रकार यह महाकाव्य ब्राह्मणीय धार्मिक व्यवस्था के विस्तार का साधन बन गया। इसका प्रमाण इस तथ्य से मिलता है कि महाभारत के प्राक्कथन में कहा गया है कि 24,000 छन्द वाला एक पूर्व मूल पाठ अभी भी सामयिक है, जबकि वर्तमान महाकाव्य में एक लाख छन्द हैं।

10) पांचाल

पांचाल *महाजनपद* रूहेलखंड तथा मध्य दोआब के कुछ भागों (मोटे तौर पर बरेली, पीलीभीत, बदायूँ, बुलंदशहर, अलीगढ़ आदि) ने स्थित था। प्राचीन ग्रंथों में पंचालों के दो वंशों : उत्तर पांचाल तथा दक्षिणी पांचाल, जिन्हें भागीरथी नदी पृथक करती थी, का उल्लेख मिलता है। उत्तरी पांचालों की राजधानी उत्तर प्रदेश के बरेली ज़िले में अहिच्छत्र में स्थित थी। दक्षिणी पांचालों की राजधानी कांपिल्य थी। संभवतः वे कुरुओं से निकट संपर्क रखते थे। यद्यपि एक या दो पांचाल शासकों का उल्लेख मिलता है, लेकिन हमारे पास उनके विषय में बहुत कम जानकारी है। वे भी *संघ* कहे जाते थे। छठी शताब्दी तक वे लुप्त हो चुके थे।

11) **मत्स्य**

मत्स्य राजस्थान के जयपुर-भरतपुर-अलवर क्षेत्र में स्थित थे। उनकी राजधानी विराट नगर थी, जोकि पांडवों के छिपने के स्थान के रूप में विख्यात है। यह क्षेत्र पशु-पालन के लिए उपयुक्त था। इसीलिए महाभारत कथा में जब कौरवों ने विराट पर आक्रमण किया तो वे मवेशियों को हाँक कर ले गए। स्वाभाविक है कि स्थायी कृषि पर आधारित शक्तियों से मत्स्य मुकाबला न कर सका। मगध साम्राज्य ने इसे अपने साम्राज्य में मिला लिया। अशोक के कुछ सर्वाधिक आदेश-पत्र प्राचीन विराट, बैरात (जिला जयपुर) में पाए गए हैं।

12) **सुरसेन**

सुरसेन की राजधानी यमुना तट पर मथुरा में थी। महाभारत और *पुराण* में मथुरा के शासक वंश को यदु कहा गया है। यादव वंश कई छोटे-छोटे वंशों जैसे अंधक, वृष्णि, महाभोज आदि में बंटा हुआ था। इनकी राज व्यवस्था भी *संघ* व्यवस्था थी। महाकाव्यीय नायक कृष्ण इन्हीं शासक परिवारों से संबंधित है। मथुरा दो विख्यात प्राचीन भारतीय व्यापार मार्ग – उत्तरापथ तथा दक्षिणापथ के बीच में स्थित था। इसका कारण यह था कि मथुरा स्थायी कृषि वाले गांगेय मैदानों और विकीर्ण जनसंख्या वाले चारागाहों, जो मालवा पठार तक पहुँचते थे, अंतर्वर्ती क्षेत्रों के बीच स्थित था। इसीलिए मथुरा एक महत्त्वपूर्ण नगर बन गया। लेकिन खंडित राजनैतिक संरचना तथा प्राकृतिक विभिन्नताओं के कारण इस क्षेत्र के शासक इसे शक्तिशाली राज्य न बना सके।

13) **अस्सक**

अस्सक महाराष्ट्र में आधुनिक पैठण के निकट गोदावरी के तट पर फैला हुआ था। पैठण को अस्सकों की राजधानी, प्राचीन प्रतिष्ठान माना जाता है। दक्षिणापथ प्रतिष्ठान को उत्तरी शहरों से जोड़ता था। अस्सकों के राजाओं के अस्पष्ट उल्लेख अवश्य मिलते हैं। किन्तु अभी तक हमारे पास इस क्षेत्र की जानकारी काफी सीमित है।

14) **अवंति**

अवंति छठी शताब्दी बी.सी.ई. के सबसे शक्तिशाली *महाजनपदों* में से एक था। इस राज्य का मुख्य क्षेत्र मोटे तौर पर मध्य प्रदेश के उज्जैन जिले से लेकर नर्मदा नदी तक फैला हुआ था। इस राज्य में एक अन्य महत्त्वपूर्ण नगर महिस्मति था जिसे अक्सर इसकी राजधानी के रूप में माना जाता है। अवंति क्षेत्र में कई छोटे बड़े कस्बे का उल्लेख मिलता है। *पुराणों* में अवंति की आधारशिला रखने का श्रेय यदुओं के हैह्य वंश को दिया गया हैं। कृषि के लिए उपजाऊ भूमि पर स्थित होने तथा दक्षिणी ओर होने वाले व्यापार पर नियंत्रण होने के फलस्वरूप यदुओं ने यहाँ एक केंद्रीकृत राज्य की स्थापना कर ली। छठी शताब्दी बी.सी.ई. में एक शक्तिशाली राजा प्रद्योत अवंति का शासक था। संभवतः उसने वत्स पर विजय प्राप्त की थी। यही नहीं, अजातशत्रु भी उससे भय खाता था।

15) **गांधार**

गांधार भारत के उत्तर पश्चिम में काबुल और रावलपिंडी के मध्य का क्षेत्र था। संभव है कि इसमें कश्मीर का भी कुछ भाग रहा हो। यद्यपि वैदिक युग में यह एक महत्त्वपूर्ण क्षेत्र था, किन्तु ब्राह्मणीय और बौद्ध परंपरा के उत्तरकालीन चरणों में इसके महत्त्व में कमी आयी। इसकी राजधानी तक्षशिला एक महत्त्वपूर्ण शहर था, जहाँ सभी *जनपदों* के लोग शिक्षा तथा व्यापार के उद्देश्य से जाते थे। छठी शताब्दी बी.सी.ई. में गांधार पर पुक्कुसती नामक राजा शासन कर रहा था। यह बिम्बिसार का मित्र था। छठी शताब्दी बी.सी.ई. के उत्तरार्ध में गांधार पर फारसियों ने विजय प्राप्त कर दी। आधुनिक तक्षशिला की खुदाई से पता चलता है कि इस स्थान पर 1000 बी.सी.ई. में ही लोग बस चुके थे और बाद के दिनों में नगर का उदय

हुआ। छठी शताब्दी बी.सी.ई तक आते-आते गांगेय घाटी के शहरों के समरूप यहाँ भी एक शहर का उदय हुआ।

16) **कंबोज**

कंबोज गांधार के निकट, संभवतः आज के पुंच क्षेत्र में स्थित था। सातवीं शताब्दी बी.सी.ई. में ही कंबोजों को ब्राह्मणीय ग्रंथों में असभ्य लोगों की संज्ञा दी गई थी। *अर्थशास्त्र* में इन्हें वर्त-शास्त्रोपाजीविन, अर्थात् कृषकों, चरवाहों, व्यापारियों तथा योद्धाओं का संगठन कहा गया है।

बोध प्रश्न 3

1) यदि आप इतिहासकार होते तो आप जीवक कथा से क्या निष्कर्ष निकालते? लिखिए।

....

....

....

....

....

2) शहरों के संबंध में साहित्यिक प्रमाणों से प्राप्त जानकारी को पुरातात्विक प्रमाण कैसे सुधारते हैं? पाँच पंक्तियों में लिखिए।

....

....

....

....

....

3) शासकों को उनसे संबंधित *महाजनपदों* के क्रम में लिखिए।

i)	अजातशत्रु	अ)	कोशल
ii)	प्रद्योत	ब)	मगध
iii)	उदयन	स)	अवंति
iv)	प्रसेनजित	द)	वत्स

4) *महाजनपदों* को उनसे संबंधित राजधानी के क्रम में रखिए :

i)	काशी	अ)	वैशाली
ii)	अंग	ब)	वाराणसी
iii)	वज्जि	स)	कौशाम्बी
iv)	वत्स	द)	चम्पा

10.12 समाज

इससे पहले कि हम छठी सदी बी.सी.ई. से चौथी सदी बी.सी.ई. तक होने वाले सामाजिक-आर्थिक परिवर्तनों के मुख्य आयामों के विषय में विस्तृत रूप से चर्चा करें, यह अनिवार्य है कि प्रस्तावना के रूप में उन बिन्दुओं का संक्षेप में विवरण करें जिनके विषय में पिछली इकाइयों में आप पढ़ चुके हैं।

प्रथम, ऐसा प्रतीत होता है कि उत्तर वैदिक काल में कृषि अर्थव्यवस्था के ठोस आधार ग्रहण करने के साथ-साथ नये भौगोलिक क्षेत्र अर्थात् ऊपरी मध्य गंगा घाटी क्षेत्र की ओर वैदिक प्राचीन संस्कृति का फैलाव हो गया था। दूसरे, समाज में शासकों और एक ऐसे वर्ग का उदय होना था जो स्वयं किसी प्रकार का उत्पादन नहीं करता था, बल्कि समाज के अन्य वर्गों द्वारा किए गए उत्पादन का उपभोग करता था। समाज में असमानता को संस्थागत रूप दे दिया गया था। संस्थागत असमानता का तात्पर्य राज्य और उसकी व्यवस्था की स्थापना होना था। इसी के साथ समाज को चार वर्णों में विभाजित करने वाले सिद्धांत का और अधिक कड़ा होना था क्योंकि *वर्ण* सिद्धान्त ने यह स्पष्ट किया कि समाज के विभिन्न वर्ग किस प्रकार अपने कर्त्तव्यों को पूरा कर सकते थे।

हमारे पास ऐसे विभिन्न प्रकार के साहित्यिक ग्रंथ हैं जो छठी सदी बी.सी.ई से चौथी सदी बी.सी.ई. तक के समाज एवं अर्थव्यवस्था के विषय में जानकारी उपलब्ध कराते हैं। ऐसे बहुत से ब्राह्मणिक ग्रंथ हैं जो दिन-प्रतिदिन के संस्कारों एवं अनुष्ठानों को सम्पन्न करने के तरीके लोगों को बताते हैं। उनको *गृह्-सूत्र, श्रौत सूत्र* और *धर्म सूत्र* कहा जाता हैं इनमें से कुछ ग्रंथ जैसे कि *अपस्तंब ग्रंथ* इस काल से संबंधित हैं। पाणिनी की व्याकरण में इस समय के बहुत से सम्प्रदायों के संक्षिप्त संदर्भ मिलते हैं। फिर भी, इस काल की सूचना के लिए हमारे लिए बौद्ध धर्म से संबंधित प्राथमिक स्रोत हैं। इनको पाली भाषा में लिखा गया है। प्रारंभिक बौद्ध धार्मिक विहित साहित्य को छठी सदी बी.सी.ई से चौथी सदी बी.सी.ई. के मध्य में लिखा गया। उत्तरी काली पॉलिश वाले मृद्भाण्डों से संबंधित पुरातात्विक स्थलों का अध्ययन इस काल के समाज को काफी जानकारी प्रदान करते हैं।

छठी सदी बी.सी.ई का समाज एक ऐसा समाज था जो अति-महत्त्वपूर्ण परिवर्तन के दौर से गुजर रहा था। समाज में प्रचारक, राजकुमार और व्यापारी हमारा ध्यान आकर्षित करते हैं। यह वह काल था जबकि ऐतिहासिक भारत में प्रथम बार नगर अस्तित्व में आते हैं। यह वह समय भी था जब साक्षर परंपरा का प्रारंभ हुआ। इस काल के अंत तक समाज में लेखन की कला को जान लिया गया था। प्राचीन भारत की प्रारंभिक लिपि को *ब्राह्मी* लिपि कहा जाता है। लिखने की जानकारी ने बड़े स्तर पर ज्ञान का विस्तार किया। इससे पहले समाज में ग्रहण किए गए ज्ञान को कंठस्थ कराके एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक पहुँचाया जाता था। जिसमें यह संभावना बनी रहती थी कि कुछ समय बाद कुछ तथ्यों को भुला दिया जाएगा या परिवर्तित कर दिया जाएगा। लिखाई की कला की जानकारी प्राप्त हो जाने का तात्पर्य था कि ज्ञान को बिना तोड़-मरोड़े संग्रहित किया जा सकता था। इस तथ्य ने परिवर्तन की चेतना को और प्रबल बनाया क्योंकि सामाजिक व्यवस्था तथा विश्वासों में समय के परिवर्तन निहित थे। जब एक बार चीजों को लिख दिया गया तो बाद के काल में विचारों एवं विश्वासों में होने वाले परिवर्तन लोगों को साफ दिखाई दिए और पता चल सका कि परिवर्तन कब और क्यों हुए। आइये, अब समाज के उन वर्गों के विषय में पढ़ें जिनको परिवर्तन के प्रवाह ने प्रभावित किया।

10.12.1 *क्षत्रिय*

तत्कालीन साहित्य में क्षत्रिय लोग समाज के सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण और शक्तिशाली वर्ग के रूप में प्रकट होते दिखाई पड़ते हैं। बुद्ध और महावीर समाज के इसी समूह से संबंधित थे। ब्राह्मणिक ग्रंथों में क्षत्रियों की समानता योद्धा जाति के साथ की गई है। *वर्ण* व्यवस्था के अंतर्गत क्षत्रियों को दूसरे स्तर की जाति के रूप में स्थान है। उनको समाज का शासक वर्ग माना जाता था। किन्तु, बौद्ध साहित्य में क्षत्रियों का दूसरा ही चित्र प्रस्तुत किया गया है। उनके विवाह के नियम दृढ़ एवं कठोर नहीं थे, जो किसी जाति की एक विशेषता होती है। उनकी वैशाली एवं कपिलवस्तु जैसे गण संघों के सत्तारूढ़ वंश के रूप में प्रस्तुत किया

गया है जैसे शाक्य, लिच्छवि, मल्ल आदि। ये ऐसे सामाजिक समूह थे जो संयुक्त रूप से भूमि के स्वामी थे। उनकी भूमि पर खेती का कार्य गुलामों एवं मजदूरों द्वारा किया जाता था, जिनको दास तथा कर्मकार कहा जाता था। ऐसा लगता है कि वे ब्राह्मणिक अनुष्ठानों को भी नहीं करते थे। बौद्ध साहित्य में गण *संघ* के केवल दो सामाजिक समूहों के विषय में ही लिखा गया है और वे उच्च जाति एवं निम्न जाति हैं। इन गण संघों के क्षेत्र में समाज का विभाजन ब्राह्मणिक जातीय व्यवस्था के अनुसार चार भागों में होने के स्थान पर केवल दोहरा था। ब्राह्मण और *शूद्र* इस विभाजन में नहीं थे। इन क्षत्रिय जातियों में बहुत-सी वैवाहिक प्रथाओं का प्रचलन था, जिसमें चचेरे भाई-बहन का आपस में विवाह भी सम्मिलित है। विवाह किसके साथ करे या किसके साथ न करें, इसके लिए वे बड़े सजग थे। ऐसा समझा जाता है कि शाक्य लोग इसी कारण समाप्त हो गए। एक कहानी के अनुसार प्रसनजित नामक कौशल के राजा ने किसी शाक्य लड़की से विवाह करने की इच्छा प्रकट की। शाक्य लोग इस प्रस्ताव की अवहेलना न कर सके। इसलिए उन्होंने एक शाक्य दास लड़की को कौशल नरेश के पास भेज दिया और जिसके साथ राजा ने विवाह कर लिया। इस कन्या से उत्पन्न होने वाली सन्तान राजसिंहासन की उत्तराधिकारी बनी। जिस समय राजा को शाक्यों की इस चालाकी का पता लगा तो उसने क्रोध में उनको नष्ट कर दिया। यद्यपि कौशल का राजा और शाक्य दोनों क्षत्रिय थे, परन्तु उनके बीच वैवाहिक संबंधों की प्रथा नहीं थी। इससे संकेत मिलता है कि जिस रूप में हम जाति व्यवस्था को समझते हैं क्षत्रिय उस रूप में जाति नहीं थे। क्षत्रिय लोग अपने स्तर एवं वंशावली के लिए बड़ा अभिमान करते थे। शाक्य, लिच्छवि, मल्ल और इसी प्रकार के अन्य गण अपनी सभाओं में भाग लेने के अधिकार को पूर्ण सजगता के साथ सुरक्षित रखते थे परन्तु इन स्थानों पर अन्य लोगों को भाग लेने की आज्ञा नहीं देते थे। ये सभाएँ उनके समाज की अधिकतर सामाजिक-आर्थिक समस्याओं के विषय में निर्णय करती थीं। वे न तो भूमि कर देते थे और न ही उनके पास संगठित सेना होती थी। युद्ध के समय पूरा समाज हथियार लेकर युद्ध करता था।

कोसल, काशी आदि के राजाओं का कई स्त्रोतों में क्षत्रिय के रूप में विवरण आता है। ब्राह्मणिक ग्रंथों से भिन्न बौद्ध साहित्यिक ग्रंथ चार वर्णीय जातीय संरचना में क्षत्रियों को प्रथम स्तर पर रखते हैं। एक प्रवचन में महात्मा बुद्ध कहते हैं – ''अगर क्षत्रिय सबसे निम्न स्तर तक पतित हो जाता है, वह तब भी सबसे अच्छा है और उसकी तुलना में ब्राह्मण निम्न है।''

कुछ क्षत्रियों को विद्वान अध्यापकों एवं विचारकों की श्रेणी में रखा गया है। कुछ ने व्यापारिक व्यवसाय अपनाया। इस प्रकार यह भी कहा जा सकता है कि क्षत्रियों के विषय में ब्राह्मणों की योद्धा जाति की अवधारणा को केवल ऊपरी व मध्य गंगा घाटी के कुछ राजतंत्र परिवारों के विषय में लागू किया जा सकता था। वे विभिन्न प्रकार के कार्यों को करते थे, जैसे कि धर्म प्रचारक का कार्य, व्यापार एवं खेती की देख-भाल करने के कार्य आदि। विशेषकर पूर्वी भारत में क्षत्रियों का अस्तित्व जाति के रूप में नहीं था। बल्कि वहाँ पर विभिन्न सामाजिक समूह स्वयं को क्षत्रिय कहते थे।

10.12.2 *ब्राह्मण*

समकालीन साहित्य में ब्राह्मणों के विषय में जो संदर्भ मिलते हैं उनसे ऐसा प्रतीत होता है कि वे एक जाति समूह के रूप में थे। जो कोई ब्राह्मण परिवार में जन्म लेता, वह सदैव ब्राह्मण ही रहता था। वह अपना व्यवसाय परिवर्तित कर सकता है, परन्तु वह सदैव ब्राह्मण ही रहता था। ब्राह्मणिक ग्रंथों में उनको विशेषाधिकार दिया गया है कि वे ईश्वर व आदमी के बीच मध्यस्थता का काम करते हैं। बलि यज्ञों को सम्पूर्ण करने के लिए पूर्ण अधिकार उनके पास थे। यह गुट इस चेतना से ग्रस्त था कि वे ही सर्वश्रेष्ठ जाति के थे। वे ऐसे नियमों का पालन करते थे, जिससे कि अपवित्र भोजन एवं निवास स्थान से बचा जा सके। तत्कालीन ब्राह्मण

ग्रंथ *शतपथ ब्राह्मण* में ब्राह्मणों के चार लक्षणों का उल्लेख है। ब्राह्मण कुल, उचित आचरण और व्यवहार, प्रसिद्धि की प्राप्ति और मनुष्य को शिक्षित करना। ऐसा करने से वे कुछ विशेषाधिकारों का उपयोग करते थे। उनका सम्मान किया जाता था, उनको भेंट दी जाती थी और उन्हें मृत्यु दण्ड नहीं दिया जा सकता था। बहुत से ब्राह्मणों ने संन्यासी एवं शिक्षक का जीवन व्यतीत किया। बौद्ध ग्रंथ सामान्यतः ब्राह्मण वर्ग के आलोचक हैं। विशेषकर जो धार्मिक नैतिक जीवन से विमुख हो गए थे। उन्होंने आडम्बरपूर्ण अनुष्ठानों तथा ब्राह्मणों के लालचीपन की भी आलोचना की। बहुत से ब्राह्मणों ने बौद्ध धर्म को स्वीकार किया। इसलिए ऐसा पाया गया था कि महात्मा बुद्ध के प्रारंभिक अनुयायियों में सबसे अधिक संख्या ब्राह्मणों की थी। किन्तु पाली साहित्य में ऐसे विवरण भी हैं जिनसे पता लगता है कि ब्राह्मणों ने भी अन्य व्यवसायों को अपनाया। *दस ब्राह्मण जातक* में एक कहानी का विवरण है जो हमें ब्राह्मणों के प्रति बौद्ध लोगों का दृष्टिकोण बताती है। कहानी इस प्रकार है, ''प्राचीन काल में कुरू राज्य की राजधानी इंद्रपट्ट थी और कुरू परिवार का राजा युधिटथिल था। उसको सांसारिक एवं आध्यात्मिक मामलों पर सलाह देने के लिए उसका एक मंत्री विधुर था।'' उसको बैठने के लिए स्थान देते हुए राजा ने कहा, ''विधुर एक ऐसा ब्राह्मण खोजो जो सदाचारी एवं विद्वान हो, वह इन्द्रीय सुख का परित्याग कर चुका हो, उसको मैं उपहार भेंट करूंगा। ओ मित्र, वह जहाँ भी हो उसकी खोज करो, उसको जो भी दिया जाएगा, उससे अति आनन्द की प्राप्ति होगी।''

''ऐ राजन, ऐसे ब्राह्मणों को खोज पाना अति कठिन है, जो सदाचारी एवं विद्वान हो, जो इन्द्रीय सुखों का परित्याग कर, आपके द्वारा दिए गए उपहारों से आनन्द ले सके।''

''ऐ राजन, ब्राह्मणों के दस वर्ग हैं, वे विभिन्न प्रकार के हैं। उनको गुणों एवं वर्गीकरण के आधार पर इस प्रकार पाया जाता है। वे जड़ी-बूटियों को एकत्रित करते हैं, स्नान करते और श्लोकों का उच्चारण करते रहते हैं। ऐ राजन, वे स्वयं को ब्राह्मण कहते हुए भी एक चिकित्सक की भांति कार्य करते हैं, आप उनको जानते हैं। ऐ महान राजा। हम उनके पास जायेंगे।''

''कुरू कुल के राजा ने उत्तर दिया, क्या वे भटक गये हैं?'' 'वे छोटी घंटियाँ लिए आपके समक्ष आते हैं, जिससे वे अपना सन्देश देते हैं, और वे नौकरों की भांति चार पहियों की गाड़ियों को भी खींचना जानते हैं।

''वे एक जल का बर्त्तन और घुमावदार बेंत लेकर चलते हैं, राजाओं की पीठ पीछे वे लोगों की भांति गाँव और देश के नगरों में विचरण करते हुए कहते हैं, अगर हमको कुछ न दिया गया तो हम गाँव या जंगल को नहीं छोड़ेंगे। वे कर इकट्ठा करने वालों के अनुरूप हैं.''

''शरीर पर लंबे बालों व लंबे नाखूनों के साथ, गंदे दांत, गंदे बाल, धूल और गंदगी से लथपथ, वे भिखारियों की भांति घूमते हैं। वे लकड़ी काटने वालों के अनुरूप हैं.।''

''वे आंवला, आम और कटहल आदि फलों, मिश्री, सुगंधित वस्तुएँ, शहद, उबटन और विभिन्न प्रकार की विक्रय-सामग्रियों को बेचते हैं। ऐ महाराज, वे व्यापारी के अनुरूप हैं.।''

''वे खेती व व्यापार, दोनों करते हैं, वे बकरियों एवं भेड़ों को पालते हैं, अपनी कन्याओं को धन के लिए बेचते हैं, वे बेटी और बेटों के विवाहों का आयोजन करते हैं। वे अम्बभट्ट वर्स के अनुरूप हैं.।''

''कुछ पुरोहित बाहर से लाये हुए भोजन का सेवन करते हैं, बहुत से लोग उनसे पूछते हैं (शकुन के लिए), वे पशुओं को बधिया करते हैं और शकुन के चिन्हों को तैयार करते हैं। वहाँ पर भेड़ों को काटा जाता है (पुरोहितों के घरों में), वे भैंस, सुअर एवं बकरी काटने वालों के अनुरूप हैं.'।

''तलवार को हथियार के रूप में धारण किए और चमकती कुल्हाड़ी को हाथ में लिए, वे वर्स की सड़क (व्यापार वाली सड़क) पर खड़े रहते हैं, वे काफिलों का नेतृत्व करते चलते हैं (उबड़-खाबड़ सड़कों पर से)। वे खालें एवं निषादों के अनुरूप हैं.।''

''वे जंगल में झोपड़ियाँ बनाते हैं, वे ऐसे जालों को निर्मित करते हैं जिनसे हिरणों, बिल्लियों, छिपकलियों, मछलियों और कछुओं का वे वध करते हैं। वे शिकारी हैं.।''

''राजा के पलंग के नीचे ही वे धन के लिए झूठ बोलते हैं, सोमरस की प्रस्तुति होने पर राजा उनके ऊपर स्नान करते हैं। स्नान कराने वालों के अनुरूप हैं.।''

(व्यक्तियों तथा स्थानों के नाम और उच्चारण मूल स्रोत पर आधारित हैं।)

यह कहानी ब्राह्मण के द्वारा किए जाने वाले विभिन्न कार्यकलापों का चित्रण प्रस्तुत करती है। यह हमें समकालीन समाज में होने वाले विभिन्न व्यवसायों की भी एक झलक प्रदान करती है। वे अपने व्यवसायों में परिवर्तन करने के बावजूद भी अकाट्य रूप से ब्राह्मण समझे जाते थे। वे अपनी जातीय पहचान को नहीं खाते थे। ऐसे विवरण मिलते हैं जिनके अनुसार विद्वान ब्राह्मण अद्वितीय थे। ऐसे भी विवरण हैं, जिनके अनुसार ब्राह्मण कृषक थे, जो अपनी खेती स्वयं करते थे या गुलामों तथा नौकरों की मदद से कराते थे। किन्तु, उनकी मुख्य पहचान एक दिव्य जाति के रूप में पहले ही स्थापित हो चुकी थी।

10.12.3 *वैश्य* और *गहपति*

ब्राह्मणिक *वर्ण* व्यवस्था में *वैश्य* अनुष्ठानिक क्रम में तीसरे स्थान की जाति थे। उनका मुख्य कार्य पशुओं को पालना, कृषि करना तथा व्यापार करना था। दूसरी ओर, बौद्ध साहित्य में *गहपति* शब्द का प्रयोग प्रचुरता के साथ किया गया है। *गहपति* का शाब्दिक अर्थ है कि घर का स्वामी। यह समुदाय भूमि का स्वामी था और ये परिवार श्रम, दासों और नौकरों के श्रम से अपनी भूमि पर खेती करते थे। ऐसा प्रतीत होता है कि उनकी उत्पत्ति वैदिक साहित्य में वर्णित *राजन्य* और *विश* गुटों से हुई थी। उनकी उत्पत्ति सम्पत्ति पर परिवार एवं व्यक्तिगत स्वामित्व के उद्‌भव की ओर संकेत करती है। इससे पहले के काल में सम्पत्ति पर सम्पूर्ण कबीले का संयुक्त स्वामित्व था। बौद्ध साहित्य में *गहपति* शब्द के अतिरिक्त अनेकों प्रकार के व्यवसायों और व्यापारियों का विवरण मिलता है, जिसका वर्गीकरण ब्राह्मणिक ग्रंथों में वैश्यों के रूप में किया गया। उनमें से प्रत्येक अपने कुटुम्बीय समूह से निकटता से संबंधित था और वे अंतर्जातीय विवाह नहीं करते थे। उनकी पहचान को उनके द्वारा किए जाने वाले व्यवसायों एवं उनकी स्थानीय भौगोलिकता के आधार पर ही निर्धारित किया जाता था। परन्तु ब्राह्मणिक ग्रंथों में जिस प्रकार से *वैश्य* जाति का चित्रण किया गया है, उस रूप में वह जाति कभी भी विद्यमान नहीं थी। इसकी अपेक्षा बहुत से समूह जातियों के रूप में बन गए। अब हम उन समूहों का अध्ययन करेंगे।

जैसा कि पहले ही बताया जा चुका है कि *गहपति* भू-स्वामियों के एक मुख्य वर्ग के रूप में थे। विशेष रूप से ध्यान देने की बात यह है कि यह गण संघों में बहुत कम मिलते हैं क्योंकि वहाँ पर भूमि का स्वामित्व क्षत्रिय वंश के पास था। इनका विवरण प्रचुरता के साथ मध्य गंगा घाटी के राजतंत्रों में मिलता है। वे कृषि संसाधनों का मुख्य उपभोग करने वाले थे और राजाओं के लिए लगान के स्रोत थे। *गहपतियों* में वे धनी लोग भी सम्मिलित थे जो बढ़ईगिरी, दवाई आदि के व्यवसायों से जुड़े थे। पाली ग्रंथों में एक दूसरे शब्द *कुटुम्बिका* का प्रयोग परिवार *(कुटुम्ब)* के स्वामी के पर्यायवाची शब्द के रूप में किया गया है। उनको धनी भू-स्वामी, साहूकार या अनाज का व्यापार करते हुए दिखाया गया है।

यह धनी-भू-स्वामियों का ही वर्ग था जिनमें से कुछ धनी व्यापारियों का विकास हुआ।

गहपतियों का विवरण व्यापारिक नगरों में भी किया गया है। सम्पत्ति पर व्यक्तिगत स्वामित्व और ब्राह्मणवाद के कमज़ोर प्रभाव के कारण *गहपतियों* ने अपनी सम्पत्ति का उपयोग व्यापार में किया। पश्चिम गंगा घाटी में इस सम्पत्ति का उपयोग बलि यज्ञों के लिए किया जाता होगा। भू-स्वामी और व्यापार की इस तरह की दो शाखाएँ हो जाने से *सेठी* वर्ग की उत्पत्ति हुई। *सेठी* का शब्दिक अर्थ है ''वह व्यक्ति जिसके पास सर्वश्रेष्ठ है'' *सेठी-गहपति अनाथपिण्डिका*, जिसने श्रावस्ती में बुद्ध को जेतवन दिया। ऐसा ही अमीर सेठी था। बनारस के एक *सेठी* का विवरण मिलता है जो व्यापार करता था और उसके पास 500 गाड़ियों का काफिला था। सिक्कों के प्रचलन के साथ उनका साहूकारी का पेशा ज़ोर-शोर से चला। समकालीन साहित्य में शतमाण, कर्षपण आदि नाम के सिक्कों का विवरण मिलता है। पुरातात्विक खुदाई से भी पता चलता है कि उस समय सिक्के प्रचलन में आ चुके थे। दूर-दराज के क्षेत्रों के साथ व्यापार के भी विवरण मिलते हैं।

बड़े व्यापारियों और भू-स्वामियों के अतिरिक्त छोटे व्यापारियों का भी विवरण मिलता है। इनमें फुटकर, व्यापारी, फेरी करके बर्तन बेचने वाले, बढ़ई, हाथी दांत की वस्तुएँ बनाने वाले, माला बनाने वाले और धातू का काम करने वाले आदि शामिल हैं। इन लोगों ने अपने व्यावसायिक *संघ* बना लिये थे। परिवार के सदस्यों के अतिरिक्त कोई भी वह व्यवसाय नहीं कर सकता था। कार्यों का यह स्थानीय विभाजन और व्यवस्यों के अनुवांशिक परम्परा ने इन्हें व्यावसायिक श्रेणियों या शिल्पी संघों का रूप दिया। इन संघों का एक मुखिया होता था जो उनके हितों की देखभाल करता था। राजा का यह कर्त्तव्य समझा जाता था कि वह श्रेणी संघों के नियमों को स्वीकार करे और उनकी रक्षा करे। श्रेणी संघों का मुखिया होता था जो उनके हितों की देखभाल करता था। राजा का यह कर्त्तव्य समझा जाता था कि वह श्रेणी संघों के नियमों को स्वीकार करे और उनकी रक्षा करे। श्रेणी ग्रंथों का संगठित रूप यह बताता है कि व्यापार और उद्योग काफी विकसित थे। इससे यह भी पता चलता है कि आर्थिक व्यवसायों पर आधारित कुछ समूह अस्तित्व में आ गए थे और अपने व्यवसायों से ही पहचाने जाते थे। यह समूह एक जाति की ही भांति थे। समूहों के अंदर ही विवाह संबंध किए जाते थे। समूह के नियम भी नहीं बदले जा सकते थे।

10.12.4 *शूद्र*

ब्राह्मणिक व्यवस्था में *शूद्र* सबसे निम्न स्तर पर समझे जाते थे। अन्य तीनों वर्गों की सेवा करना ही उनका कर्त्तव्य था। गैर-ब्राह्मणिक ग्रंथों के बहुत से ऐसे गरीब और दलित समूहों की चर्चा करते हैं जो *शूद्र* कहे जाते थे। पाली साहित्य में बहुधा दास और कर्मकार (मजदूरी पाने वाले) लोगों का विवरण आता है। दलि्द्द शब्द का प्रयोग ऐसे लोगों के लिए होता है जो बहुत गरीब थे और जिनके पास खाने के लिए या तन ढंकने के लिए कुछ नहीं होता था। इस तरह पहली बार हमें विलासिता में रहने वाले धनी और अत्यंत गरीब, दोनों के बारे में विवरण मिलता है। समाज के कुछ समूहों का अत्यंत गरीब होना तथा *शूद्र वर्ण* के अस्तित्व में आने का कारण शायद यह था कि समाज के धनी और शक्तिशाली वर्ग ने भूमि और अन्य संसाधनों पर अधिकार कर लिया था। सभी तरह के संसाधनों के अभाव में *शूद्र* वर्ग के लोग दूसरों की सेवा और धनी लोगों की भूमि पर काम करने के लिए मजबूर थे। सामान्यतः कारीगर और दस्तकार भी शूद्रों की श्रेणी में मान लिए जाते थे। अधिकतर धर्मसूत्र शूद्रों के विभिन्न समूहों के उदय के लिए संकीर्ण जाति की अवधारणा को उत्तरदायी मानते हैं। यह संकल्पना के अनुसार अगर कोई अंतर्जातीय विवाह करेगा तो उसके वंशज निम्न जाति के होंगे। कर्मकाण्डों के लिए यह लोग सामाजिक व आर्थिक स्तर में किसानों, दासों और कारीगरों की तरह थे। वैदिक समाज के कुटुम्बीय संबंधों के ह्रास से यह *वर्ण* सबसे अधिक हानि में रहा।

समकालीन साहित्य में दस्यु का काफी विवरण मिलता है। यह ऐसे दास थे, जिनकी कोई वैधता नहीं थी। *शूद्र* मजदूर अधिकांशतया युद्धबंदी होते थे अथवा ऐसे लोग थे जो ऋण वापस नहीं कर पाते थे। धनी लोगों की भूमि पर उनसे जबरदस्ती काम कराया जाता था। ग्रामीण क्षेत्रों में दास, कर्मकार तथा कसक (कृषक) मजदूरों के प्रमुख स्रोत थे। नगरों के अस्तित्व में आने से अमीर और गरीब के बीच की खाई और बढ़ गई।

उपरोक्त समूहों के अतिरिक्त शुद्र के काल की सामाजिक श्रेणियों की सूची बहुत लम्बी है। घुमक्कड़ नाचने और गाने वाले, जो एक गाँव से दूसरे गाँव घूमते फिरते थे, अपनी कला का प्रदर्शन करते थे। इनके अतिरिक्त करतब और हाथ की सफाई दिखाने वाले, मसखरे, हाथी के करतब दिखाने वाले, सूत्रधार, सैनिक, लेखक, धनुर्धारी, शिकारी और नाई आदि कुछ ऐसे सामाजिक समूह हैं जिनके विषय में हमें जानकारी मिलती है। इनको समकालीन जातीय श्रेणियों में रख पाना कठिन है। शायद यह *वर्ण* व्यवस्था के बाहर थे। इनमें से अधिकतर कृषि पर आधारित नये समाज के प्रभाव क्षेत्र से बाहर थे। सामान्यतः उन्हें घृणा की दृष्टि से देखा जाता था। कभी-कभी यह समूह विद्रोह भी करते थे। *जातक* कथाओं में युद्धों के विवरण भरे पड़े हैं। गरीब शूद्रों के शहर के बाहर निवास करने का विवरण मिलता है। इसका सीमा प्रभाव यह पड़ा कि छुआछूत अस्तित्व में आया। चाण्डाल अलग गाँवों में रहते थे। उन्हें अत्यधिक अछूत माना जाता था। यहाँ तक कि एक सेठी की लड़की को चाण्डाल देखने पर अपनी आंखे धोनी पड़ी। इसी प्रकार एक ब्राह्मण इस बात से चिन्तित था कि चाण्डाल के शरीर को छूने वाली हवा अगर उसे छू गई तो वह (ब्राह्मण) अपवित्र हो जाएगा। चाण्डाल लोग केवल मरे हुए आदमी के शरीर से उतारे वस्त्र पहन सकते थे और टूटे हुए बर्तनों में खाना खा सकते थे। पुक्कुस, निषाद और वेण इसी प्रकार के अन्य घृणित समूहों में आते थे। राजा के शासक के रूप में रहने का समर्थन यह कहकर किया जाता था कि वह लूटमार करने वालों कबीलाइयों से जन-मानस की रक्षा करता था। यह वह पिछड़े हुए शुद्र थे जो जंगलों में रहते थे और वहाँ से खदेड़े जाते थे। वे या तो दास बन जाते थे या डाकू। समकालीन साहित्य में डाकुओं के गाँवों का भी वर्णन आता है।

10.12.5 घुमक्कड़ सन्यासी

इस काल का एक प्रमुख समूह परिब्राजक और *श्रवण* का था। यह वह लोग थे जिन्होंने अपने घर त्याग दिये थे। वह लोग एक स्थान से दूसरे स्थान पर घूमते रहते थे और जीवन के अर्थ, समाज और आध्यात्मिकता पर चर्चा करते थे। महावीर और बुद्ध इसी प्रकार के लोगों में थे।

10.12.6 स्त्रियों की दशा

छठी शताब्दी बी.सी.ई. के समाज और अर्थव्यवस्था के परिवर्तनों ने स्त्रियों की स्थिति को भी प्रभावित किया। चूंकि पिता की सम्पत्ति पर पुत्र का अधिकार प्राप्त होता था। इसलिए व्याभिचार रोकने पर बहुत ज़ोर दिया जाता था। समकालीन साहित्य में स्थान-स्थान पर कहा गया है कि राजा के दो प्रमुख कर्त्तव्य हैं – सम्पत्ति और परिवार की मर्यादा का उल्लंघन करने वालों को दंड देना। आज्ञाकारी दास की भांति रहने वाली पत्नी को आदर्श पत्नी कहा जाता था। परन्तु यह बात मुख्यतः अमीर लोगों की पत्नियों पर लागू होती थीं। उनके लिए पत्नी वैध सन्तान को जन्म देने का साधन मात्र थी। परन्तु साथ ही ऐसी महिलाओं की संख्या भी बहुत बड़ी थी जो अपने स्वामी और स्वामिनियों की सेवा करने में सम्पूर्ण जीवन व्यतीत कर देती थीं। महिलाओं को आदमियों की तुलना में हेय दृष्टि से देखा जाता था। उन्होंने किसी भी सामान्य सभा में बैठने के योग्य नहीं समझा जाता था। स्त्रियों को हमेशा पिता, भाई अथवा पुत्र के नियंत्रण में रहना होता था। *संघ* (बौद्ध) में भी उन्हें पुरुषों से नीचा समझा जाता था।

10.13 अर्थव्यवस्था

हमने देखा कि राज्य तंत्र की स्थापना और समाज में श्रेणीबद्धता, दोनों प्रक्रियाएँ पहली सहस्राब्दि बी.सी.ई. के मध्‍यतक काफी महत्त्वपूर्ण स्थान ले चुकी थीं। यह दोनों प्रक्रियाएँ, जो आपस में संबंधित थीं, इसलिए अस्तित्व में आई क्योंकि नई कृषि व्यवस्था न केवल कृषकों को जीवन यापन के साधन प्रदान कर सकी। बल्कि उस वर्ग को भी, जो सीधे कृषि से जुड़ा हुआ नहीं था। छठी-पाँचवीं शताब्दी बी.सी.ई. की आर्थिक दशा पर प्रकाश डालने वाले साहित्यिक और पुरातात्विक स्रोत उस काल के बढ़े हुए कृषि उत्पादन की पुष्टि करते हैं (इन स्रोतों का उल्लेख पहले इस इकाई में किया गया है)। इसके अतिरिक्त

1) पूर्णतया दान-दक्षिणा पर आधारित मठ-व्यवस्थाओं का विकास भी अधिक कृषिक उत्पादन को दर्शाता है।

2) अगर कृषि उत्पादन इतना न होता कि समाज के अन्य वर्गों की खाद्य आवश्यकताओं की पूर्ति न कर पाता व सोलह *महाजनपद*, उनके महत्त्वपूर्ण नगर और स्थायी सेनाओं का अस्तित्व संभव नहीं होता।

3) साथ ही इस काल में ऐसे प्रमुख नगर बन चुके थे जो व्यापार मार्गों पर स्थित थे तथा जिनमें विविध प्रकार के उच्च स्तर के व्यवसाय थे। नदी घाटियों के विशाल मैदानी क्षेत्रों में ऐसे नगरों का होना भी कृषि द्वारा अधिक खाद्य उत्पादन का सबूत है।

आइए, इस कारण के आर्थिक जीवन के कुछ महत्त्वपूर्ण पहलुओं पर दृष्टि डालें।

10.13.1 खाद्य उत्पादक अर्थव्यवस्था के विकास के कारण

आइए पहले यह देखें कि इस बढ़े हुए कृषक और खाद्य उत्पादन के लिए कौन से तत्व उत्तरदायी थे। समकालीन स्रोतों का अध्ययन निम्न कारकों को दर्शाता है :

1) छठी शताब्दी बी.सी.ई. के बाद के काल में लोहे के औज़ारों ने गंगा के मैदानों में जंगलों को साफ करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। इस क्षेत्र के बड़े भूभाग में धान, गेहूँ, जौ और बाजरे की खेती होती थी।

2) बौद्ध लोग पशुओं की रक्षा पर बहुत बल देते थे। *सुत्त पिटक* के अनुसार पशुओं को नहीं मारना चाहिए क्योंकि वह अनाज प्रदान करते हैं। इस प्रकार, कृषि कार्यों के लिए पशुओं की रक्षा करने पर बल दिया जाता था।

3) उत्तर वैदिक काल की तुलना में शुद्र के काल में अधिक अनाज के उत्पादन का एक कारण रोपाई द्वारा धान की पैदावार करना था।

4) धान अथवा चावल का उत्पादन करने वाली अर्थव्यवस्था की कमी की पूर्ति के लिए पशु-पालन और शिकार किया जाता था। वह उनकी अर्थव्यवस्था का एक प्रमुख साधन और जीवन यापन का स्रोत था। अनेकों पुरातात्विक स्थलों से मवेशी, भेड़, बकरी, घोड़े और सुअर की हड्डियाँ बड़ी मात्रा में प्राप्त हुई हैं। पशुओं का उपयोग केवल हल चलाने और सामान ढोने के लिए ही नहीं होता था, बल्कि अनाज का एक वर्ग संभवतः माँसाहारी भी था।

10.13.2 ग्रामीण अर्थव्यवसथा

आंतरिक इलाकों की उपजाऊ भूमि की अधिक उपज के कारण व्यापार भी विकसित हुए। भरण पोषण पर आधारित अर्थव्यवस्था का बाज़ार की अर्थव्यवस्था में संक्रमण हो रहा था।

सिक्कों के प्रचलन ने इस प्रक्रिया में बहुत योगदान किया। इसने अधिक गतिशीलता तथा व्यवसायों और व्यापार को विकास प्रदान किया तथा एक बड़े क्षेत्र में आर्थिक गतिविधियों को बढ़ाया। इस सबका परिणाम यह हुआ कि एक जटिल ग्रामीण और शहरी अर्थव्यवस्था का विकास हुआ।

बहुत से समकालीन साहित्यिक स्रोतों से यह जानकारी मिलती है कि बहुत से ग्रामीण केंद्रों की अर्थव्यवस्था का अपना एक रूप था। यह किसान स्वामित्व की ग्राम समुदायों की एक प्रणाली पर आधारित था। पाली साहित्य में तीन प्रकार के गाँवों का विवरण मिलता है :

1) ऐसे गाँव जिनमें विभिन्न जातियों व समुदायों के लोग रहते थे। इस प्रकार के गाँव अधिक थे।

2) अर्द्ध-शहरी गाँव एक प्रकार के शिल्प गाँव थे। यह अन्य गाँवों के लिए एक बाज़ार का काम करते थे और शहरों तथा ग्रामीण क्षेत्रों के बीच सम्पर्क के रूप में कार्य करते थे।

3) सीमावर्ती गाँव जिसमें शिकारी तथा बहेलिये (चिड़िया पकड़ने वाले) आदि शामिल थे जो एक साधारण जीवन जी रहे थे।

ग्रामीण अर्थव्यवस्था का विकास अधिक आबादी वाले क्षेत्रों से अधिशेष आबादी को स्थानांतरित करके, और साथ ही क्षयकारी गाँवों के पुनर्वास के द्वारा नई बस्तियों की स्थापना के माध्यम से हुआ। नये स्थानों पर बसने के लिए राज्य द्वारा पशु, बीज, घन और सिंचाई के ऐसे विषयों में साधन प्रदान कराए जाते थे। इन लोगों को करों में छूट और अन्य सुविधाएँ भी दी जाती थीं। अवकाश प्राप्त अधिकारियों और पुरोहितों को भी नये क्षेत्रों में भूमि प्रदान की जाती थी। इन क्षेत्रों की भूमि को बेचना, गिरवती रखना और उत्तराधिकार में देना मना था। चरागाहों पर सबका समान अधिकार था। इन गाँवों की अपनी स्वतंत्र अर्थव्यवस्था थी। ग्रामीण क्षेत्रों का प्रमुख व्यवसाय खेती करना था। गाँवों की अतिरिक्त उपज शहरों में पहुँचती थी तथा शहर आवश्यकता की अन्य वस्तुएँ गाँवों तक पहुँचाते थे।

खेती के प्रमुख व्यवसाय होने के साथ-साथ पशु-पालन, खेती से संबंधित छोटे कारीगर उत्पादन, जंगल और स्थानीय आवश्यकता के लिए पशुओं की आपूर्ति ग्रामीण अर्थव्यवसथा की अन्य विशेषताएँ थीं।

10.13.3 शहरी अर्थव्यवस्था

शहरी अर्थव्यवस्था पर उन व्यापारियों तथा कारीगरों का प्रभाव था जो एक विस्तृत क्षेत्र के लिए वस्तुओं का भारी मात्रा में उत्पादन और विनिमय करते थे। शहरी अर्थव्यवस्था के विकास के लिए निम्न चीजें आवश्यक थीं :

- अतिरिक्त अन्न उत्पादन (जिसकी पूर्ति पास के गाँवों से होती थी)
- विशिष्ट कारीगर उत्पादन
- व्यापारिक विनिमय के केंद्र
- धातु मुद्रा का प्रचलन
- कानून और व्यवस्था स्थापित करने वाली राजनैतिक व्यवस्था
- पढ़ा-लिखा सामाजिक वर्ग।

हमारी अर्थव्यवस्था मुख्यतः दो कारक पर निर्भर थी :

क) ऐसा औद्योगिक उत्पादन जिसमें बहुत प्रकार के व्यवसायी और कारीगर लगे हुए थे।

ख) शहर का आंतरिक तथा अन्य शहरों के साथ व्यापार।

हम प्रत्येक का अलग-अलग अध्ययन करेंगे।

प्राचीन शहर के बाजार की चित्रकार की परिकल्पना। स्रोत : ई.एच.आई.-02, खंड-4, इकाई-16।

10.13.4 शहरी व्यवसाय

शहरी व्यवसायों को दो श्रेणियों में बाँटा जा सकता है। पहले वह जो उत्पादन की किसी न किसी प्रक्रिया से जुड़े थे और दूसरे वह जिनका किसी प्रकार के उत्पादन से कोई संबंध नहीं था। द्वितीय वर्ग मुख्यतः प्रशासनिक अधिकारियों का था और इसका अर्थव्यवस्था पर कोई सीधा प्रभाव नहीं पड़ता था। यह सेवाओं की श्रेणी में आता था। व्यापारी वर्ग भी इस श्रेणी में आता था, परंतु वह वस्तुओं के वितरण और विनिमय द्वारा अर्थव्यवस्था में एक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता था। उत्तरी भारत में अनेक स्थलों की खुदाई से प्राप्त मिट्टी के बर्तन (विशेषकर उत्तरी काली पॉलिश वाले), पकाई गई मिट्टी की मानव व पशु आकृतियाँ और खेल तथा मनोरंजन की वस्तुएँ, हड्डी और हाथी दांत की वस्तुएँ; सिक्के व शीशे की वस्तुएँ, मनके, तांबे और लोहे की वस्तुएँ आदि अनेक प्रकार के कारीगर उत्पादन के साक्षी हैं। यह कारीगर उत्पादन निम्न वर्गों में बाँटे जा सकते हैं :

1) मिट्टी के बर्तन बनाना, जिनमें पकाई गई मिट्टी की मानव व पशु आकृतियाँ और ईंटें सम्मिलित हैं।
2) बढ़ईगिरी और लकड़ी की वस्तुओं का निर्माण।
3) धातु कला
4) पत्थर तराशने की कला
5) कांच निर्माण कला
6) हड्डियों और हाथी दांत की वस्तुओं की कला
7) अन्य मिश्रित प्रकार के उद्योगों में माला बनाना, तीर व धनुष बनाना, कंघी, टोकरियाँ, इत्र, तेल व वाद्य यंत्र थे।

10.13.5 व्यापार तथा व्यापारिक मार्ग

विशिष्ट कारीगर उत्पादन के साथ व्यापार का विकास भी जुड़ा हुआ है। उस काल में देश के अंदर और विदेशों से व्यापार काफी फल-फूल रहा था। अनेक व्यापारी अनेकों वस्तुओं के व्यापार से समृद्ध हो रहे थे। रेशम, मलमल, हथियार, सुगंधित द्रव्य, हाथी दांत, हाथी दांत की वस्तुएँ तथा जेवरात इत्यादि थे।

सिक्कों पर बने हुए चिह्न। स्रोत : ई.एच.आई.-02, खंड-2, इकाई-16।

यह व्यापारी पूरे देश में नदी मार्गों से यात्रा करते थे और पूर्व में ताम्लुक और पश्चिम में भड़ौच से समुद्री यात्राओं से विदेशों में श्रीलंका और बर्मा तक जाते थे। देश के अंदर यह लोग कुछ निश्चित मार्गों का प्रयोग करते थे। इनमें से एक मार्ग श्रावस्ती से प्रतिष्ठान (आधुनिक पैठण जो महाराष्ट्र में है) तक था, दूसरा मार्ग श्रावस्ती को राजगृह से जोड़ता था, तीसरा मार्ग हिमालय की तलहटी से घूमता हुआ, तक्षशिला को श्रावस्ती से जोड़ता था, चौथा प्रमुख मार्ग काशी को पश्चिमी तटों से मिलाता था। नगर ही दूरस्थ व्यापार के प्रमुख केंद्र थे। क्योंकि यह उत्पादन और वितरण के प्रमुख केंद्र थे और अधिक सुरक्षित थे।

वस्तु-विनिमय के समय का अंत हो रहा था। अब वस्तुओं के क्रय-विक्रय के लिए *कहपण* (*कर्षपण*) नामक सिक्का प्रचलन में आ गया था। यह चांदी और तांबे का सिक्का था जिस पर व्यापारी अथवा शिल्पी *संघ* की छाप रहती थी, जो इन सिक्कों के मानदंड का प्रतीक थी। बैंकों की परिकल्पना भी नहीं थी। अतिरिक्त धन से तो सोने के ज़ेवर आदि खरीदे जाते थे या इस धन को बर्तनों में रखकर ज़मीन में दबा कर रखा जाता था या किसी मित्र के पास सुरक्षित रख देते थे।

बोध प्रश्न 4

1) *दस ब्राह्मण जातक* की कथा से आप क्या निष्कर्ष निकाल सकते हैं? पाँच पंक्तियों में अपना उत्तर लिखिए।

....

....

....

....

....

2) ब्राह्मणों और क्षत्रियों में क्या असमानताएँ थीं?

....

....

....

....

....

3) शूद्रों की पतनशील दशा के कारण बताइए।

....

....

....

....

....

4) वह कौन-से प्रमुख कारक थे जिन्होंने 600 बी.सी.ई. में कृषि के विकास को प्रभावित किया?

....

....

....

....

....

5) ग्रामीण अर्थव्यवस्था का विकास किस प्रकार हुआ?

....

....

....

....

....

6) इस इकाई के अध्ययन काल के प्रमुख व्यापार मार्ग कौन-कौन से थे?

....

....

....

....

....

10.14 सारांश

हमने छठी शताब्दी बी.सी.ई. के भारत में विद्यमान राजनैतिक परिस्थितियों की समीक्षा की। नए सामाजिक-राजनैतिक विकासों से गुजर रहे क्षेत्रों के रूप में उदित हुए *महाजनपद* विशिष्ट

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

भौगोलिक क्षेत्रों में स्थित थे। महत्त्वपूर्ण तथ्य यह है कि ये सात *महाजनपद* – अंग, मगध, वज्जि, मल्ल, काशी, कोशल तथा वत्स – मध्य गांगेय घाटी में स्थित थे। यह चावल उत्पादन का क्षेत्र है, जबकि ऊपरी गांगेय घाटी गेंहू उत्पादक क्षेत्र है। ऐसा महसूस किया गया है कि भारत में परंपरागत कृषि प्रणाली में चावल की उपज गेंहू की उपज से अधिक रही है। चावल उत्पादक क्षेत्रों में जनसंख्या का घनत्व भी अधिक था। *महाजनपदों* के पास धातु जैसे महत्त्वपूर्ण साधन भी मौजूद थे। इन तथ्यों को मध्य गांगेय घाटी के राजनैतिक-आर्थिक शक्ति के केंद्र बनने का कारण माना जा सकता है। इस क्षेत्र में कई *महाजनपदों* के एक-दूसरे के निकटस्थ होने से यह भी संभावना बराबर बनी रहती थी कि कोई महत्त्वाकांक्षी शासक संपन्न पड़ोसी क्षेत्र को हड़पने का प्रयास कर सकता था। साथ ही पड़ोसी क्षेत्र पर नियंत्रण बनाए रखना भी आसान था। पंजाब और मालवा के *महाजनपदों* के शासकों को संपन्न क्षेत्रों में पहुंचने के पूर्व रिक्त भौगोलिक क्षेत्रों को पार करना पड़ा होगा। इस प्रकार मध्य गांगेय घाटी के शासकों को अपनी शक्ति सुदृढ़ बनाने में सपाट मैदानी भूभाग तथा घनी बस्तियों ने काफी सहायता की। फिर वह स्वाभाविक ही है कि इस क्षेत्र की शक्ति, मगध, बाद के काल में सबसे शक्तिशाली साम्राज्य के रूप में उभरा।

नगर की उत्पत्ति दो निर्णायक प्रक्रियाओं का परिणाम थी जिसमें प्रथम है मनुष्य की प्रकृति के साथ रिश्ता अर्थात् लोहे का उपयोग और धान की रोपाई की तकनीक की जानकारी हो जाना जिसके कारण गंगा घाटी के क्षेत्र में लोगों ने कृषि पैदावार बढ़ाने में सफलता प्राप्त कर ली। दूसरी प्रक्रिया थी, छठी शताब्दी बी.सी.ई. में समाज की आंतरिक संरचना में परिवर्तन होना। इसका तात्पर्य यह था कि शासक जातियाँ जैसे कि क्षत्रिय और ब्राह्मण गहपति के साथ मिलकर अतिरिक्त खाद्य उत्पादन और अन्य सामाजिक उत्पाद पर अधिकार प्राप्त कर लेते थे। जिन स्थानों पर घनी व ताकतवर लोग रहते थे, उनको शहर या नगर कहा जाता था। यह निश्चित है कि इन लोगों की उपस्थिति का अर्थ था कि उन स्थानों पर बड़ी संख्या में गरीब लोगों की उपस्थिति होना। इसी कारणवश कुछ विद्वानों का मत है कि बौद्ध धर्म की उत्पत्ति इस नगरीय दरिद्रता के कारण हुई थी। प्राचीन भारतीय साहित्य में नगरों पर, पट्टन व नगर जैसे विभिन्न शब्दो के रूप में वर्णित किया गया है। फिर भी साहित्य में नगरों के शान-शौकत एवं आकार के लिए जो विवरण मिलता है, वह अतिरंजित प्रतीत होता है। प्राचीन नगर स्थलों की खुदाई से भी लगता है कि यह साहित्यिक विवरण अतिरंजित है।

इस इकाई में आपने जो अध्ययन किया वह अधिकतर प्रारम्भिक पाली ग्रंथों और उत्तरी काली पालिश वाले बर्तनों के काल के पुरातात्विक स्त्रोतों के आधार पर लिखा गया है। इसी कारण में राज्य के गठन और सामाजिक श्रेणीबद्धता की प्रक्रिया अस्तित्व में आई और पहली सहस्त्राब्दी बी.सी.ई. के मध्य तक इसने काफी महत्त्व प्राप्त कर लिया। समाज में चारों वर्णों, ब्राह्मण, क्षत्रिय, *वैश्य* और *शूद्र* के सामाजिक कार्य कलापों पर नये सिरे से बल दिया गया। उत्तर वैदिक काल अथवा सलेटी रंग के मृद्भाण्डों की संस्कृति, जिसमें ब्राह्मण और क्षत्रिय मुख्य भूमिका निभाते थे, में कई परिवर्तन हुये। यह परिवर्तन विशेष कर व्यापारी या *वैश्य* वर्गों के कारण थे, जिन्होंने बढ़ते व्यापार से काफी धन कमा लिया था। शूद्रों पर तरह-तरह के नियंत्रण लगाये जा रहे हैं। खाद्यान्न का उत्पादन काफी बढ़ गया था। उत्पादन में वृद्धि के प्रमुख कारण लोहे के औज़ारों का प्रयोग, रोपाई द्वारा धान की खेती तथा धार्मिक आधार पर पशुओं की रक्षा करना था। सामान्य भरण पोषण पर आधारित अर्थव्यवस्था का स्थान अब बाजार अर्थव्यवस्था ने ले लिया था। व्यापार तथा धातु के सिक्कों के प्रचलन ने शहरी अर्थव्यवस्था का विकास किया। जहाँ एक ओर ग्रामीण अर्थव्यवस्था का आधार पशु पालन और भूमि, वन और पशु पालन से सम्बन्धित साधारण कारीगर उत्पादन था दूसरी ओर शहरी अर्थव्यवस्था बड़ी संख्या में पेशेवरों और शिल्पकारों का वर्चस्व था जो व्यापक प्रसार और अधिक खपत के लिए उत्पादन करते थे। इससे बड़ी गतिशीलता पैदा हुई व व्यापार और

व्यापारिक मार्गों का विस्तार हुआ और एक जटिल ग्रामीण व शहरी अर्थव्यवस्था का विकास हुआ।

10.15 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

1) ग

2) (i) X (ii) ✓ (iii) X (iv) ✓

3) आपने अपने उत्तर में बहुत से शब्दों की व्यवस्था करनी चाहिए (जैसे कि *पुर, दुर्ग, निगम, नगर*) इनका प्रयोग साहित्य में किया गया है और इनके अंतर भी बताईये।

4) आपको नये प्रकार की मिट्टी के बर्तनों के दृष्टांत देने चाहिए। (उत्तर काली पॉलिश वाले बर्तन)। सिक्कों का प्रारंभ, और घरों के लिए पक्की ईंटों का उपयोग। यह भी बताइए कि साहित्य में किस प्रकार से नगरों का चित्रण बढ़ा-चढ़ाकर किया गया है और उसकी पुरातात्विक साक्ष्य ने कैसे पुष्टि की है।

5) (i) ✓ (ii) ✓ (iii) X (iv) ✓

बोध प्रश्न 2

1. आप अपने उत्तर में यह दर्शाइए कि विशिष्ट भौगोलिक क्षेत्रों के प्रति साहित्यिक उल्लेख किस प्रकार पुरातत्वशास्त्रियों को इस युग के नगरों की खुदाई में सहायता करते हैं। भाग 10.5 देखिए।

2. भाग 10.9 देखिए।

3) (i) ✓ (ii) X (iii) ✓ (iv) ✓

बोध प्रश्न 3

1. एक इतिहासकार के रूपमें आपको (अ) व्यापारियों तथा असनातनी सम्प्रदायों जैसे नए समूहों के उदय (ब) नई बस्तियों के उदय, तथा (स) जन-साधारण द्वारा की गई लम्बी यात्राओं का उल्लेख करना चाहिए।

2) उपभाग 10.10.3 देखिए।

3) (i) ब (ii) स (iii) द (iv) अ

4) (i) ब (ii) द (iii) अ (iv) स

बोध प्रश्न 4

1) उपभाग 10.12.2 देखें। अपने उत्तर में आपको यह बताना चाहिए कि *जातक* के अनुसार कैसे ब्राह्मणों ने अपना व्यवसाय चुनने की छूट थी और वे कौन-कौन से व्यवसायों में संलग्न थे।

2) उपभाग 10.12.1 देखें। आपके उत्तर में दोनों समूहों की वह भूमिका सम्मिलित होनी चाहिए जो समकालीन साहित्य में मिलती है इनके द्वारा किए जाने वाले विभिन्न क्रिया कलापों पर भी ध्यान दीजिए।

3) देखें उपभाग 10.12.4। आपको अपने उत्तर में यह दिखाना चाहिए कि किस प्रकार

शक्तिशाली वर्गों द्वारा भूमि पर अधिकार, ऋणबद्धता, कानूनी अधिकार का अभाव, उच्च *वर्ण* के लोगों के जन्म की पवित्रता और शूद्रों के जन्म की अपवित्रता आदि शूद्रों की गिरती हुई दशा के लिए उत्तरदायी थे।

4) उपभाग 10.13.1 देखें। आप के उत्तर में बढ़े हुये कृषि उत्पादन के लिए उत्तरदायी तत्वों जैसे लोहे के औज़ारों का प्रयोग कृषि के लिए पशुधन की रक्षा और रोपाई द्वारा धान की खेती आदि तथ्य सम्मिलित होने चाहिए।

5) उपभाग 10.13.2 देखें। आप अपने उत्तर में यह दिखाएँ कि नई बस्तियों की स्थापना से ग्रामीण अर्थव्यवस्था का किस प्रकार विकास हुआ।

6) उपभाग 10.3.5 देखें। आप अपने उत्तर में तमलूक और भड़ौच से बर्मा और श्रीलंका के मार्गों की चर्चा करें साथ ही देश के चार आंतरिक प्रमुख मार्गों – श्रावस्ती से प्रतिष्ठान, श्रावस्ती से राजगृह, तक्षिला से श्रावस्ती और काशी से पश्चिमी घाटों तक के विषय में भी लिखें।

10.16 शब्दावली

असनातनी सम्प्रदाय : छठी शताब्दी बी.सी.ई. के दौरान उभरा आंदोलन जिसने वैदिक धर्म को चुनौती दी।

शहरी बस्तियाँ : वे स्थान जहाँ की काफी बड़ी जनसंख्या खाद्योत्पादन न करके अन्य गतिविधियों से जुड़ी होती हैं।

पाली : मगध तथा कौशल के क्षेत्र में बोली जाने वाली भाषा। बौद्ध साहित्य इसी भाषा में रचा गया है।

प्राकृत : अशोक के काल में मगध में बोली जाने वाली भाषा। ऐतिहासिक भारत में प्रथम लिखित सामग्री इसी भाषा में मिली है।

पेरिस : बौद्ध साहित्य में नीची जाति के लिए प्रयोग किया जाने वाला शब्द।

भीतरी प्रदेश : वह क्षेत्र जो शहर के प्रभाव के अंतर्गत आता है और दोनों एक दूसरे पर निर्भर होते हैं।

टैक्स (कर) : वह धन जिसको शासक, व्यक्तियों या गुटों से शक्ति के बल पर स्थायी आधार पर प्राप्त करते हैं।

नज़राना : परतंत्रता का बोध कराने के लिए कभी-कभी दिया जाने वाला कर।

राज्य-समाज : ऐसा समाज जिसमें शासक और शक्ति, अमीर और गरीब की उपस्थिति हो।

रोपाई द्वारा खेती : इस विधि के अनुसार, धान के पौधे को एक जगह पर उठाया जाता है और वहाँ से उखाड़ कर उसको पानी भरे खेतों में लगा दिया जाता है। जहाँ पर वह बढ़ता है और फसल देता है। चावल की शुष्क खेती में बीज खेतों में बिखरा कर बोये जाते हैं। रोपाई द्वारा धान की खेती से उपज अधिक होती है।

वेस्स : पाली भाषा में 'वैश्य' के लिए प्रयोग किया जाने वाला शब्द।

जेतावन : बुद्ध को एक व्यापारी द्वारा दान में दी गई वाटिका।

पुक्कुस, निषाद, वेन : तीन अछूत जातियाँ।

सुत्त पिटक : एक बौद्ध ग्रंथ।

जातक कथाएँ : बुद्ध के पिछले जन्मों से जुड़ी हुई कहानियों का संग्रह।

दस ब्राह्मण जातक : *जातक* कथाओं की एक पुस्तक का नाम।

10.17 संदर्भ ग्रंथ

गौंडा, जे. (1969) *ऐशिएँट इंडियन किंगशिप फ्रॉम द रिलिजियस प्वाईंट ऑफ व्यू*, लाईडेन।

लाल, माखन (1984) *सेट्टलमेंट हिस्ट्री एण्ड द राईज ऑफ सिविलाइजेशन इन गंगा-यमुना दोआब फ्रॉम 1500 बी.सी.-300 ए.डी.* तक, दिल्ली।

लॉ, बी.सी. (1973) *ज्योग्राफी ऑफ अली बुद्धिस्म*। रिप्रिंट, वाराणसी।

रॉय, कुमकुम (1994) *द इमरजैंस ऑॅ मोनार्की इन नोर्थ इंडिया*, दिल्ली।

शर्मा, आर. आस. (1983) *मैटिरियल कल्चर एण्ड सोशियल फॉर्मेशन्स इन ऐंशियंट इण्डिया*, दिल्ली।

शर्मा, आर. एस. (1991) *ऐस्पैक्ट्स ऑफ पॉलिटिकल आइडियाज एण्ड इंस्टीच्यूशंस इन ऐशियंट इण्डिया*। उरा एडिशन, दिल्ली।

थापर, रोमिला (1996) *फ्रॉम लिनियेज टू स्टेट, दूसरा संस्करण*, दिल्ली।